शेर का दिल

डोगरी लोककथाएं

बंसीलाल गुप्त

शेर का दिल

(डोगरी लोककथाएं)

बंसीलाल गुप्त

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

प्रथम संस्करण : फाल्गुन 1894 (अप्रैल 1973)
द्वितीय संस्करण : चैत्र 1901 (मार्च 1979)
पुनर्मुद्रण : अग्रहायण 1916 (दिसम्बर 1994)

© प्रकाशन विभाग

ISBN 81-230-0248-3

मूल्य : 26 रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित।

विक्रय केन्द्र • प्रकाशन विभाग

- सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001
- कामर्स हाउस, करीमभाई रोड, बालार्ड पायर, बम्बई-400038
- 8 एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता-700069
- एल.एल.ए. आडीटोरियम, 736 अन्नासलै, मद्रास-600002
- बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004
- निकट गवर्नमेंट प्रेस, प्रेस रोड, त्रिवेन्द्रम-695001
- 10-बी. स्टेशन रोड, लखनऊ-226019
- राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन्स, हैदराबाद-500004

दि सेन्ट्रल इलैक्ट्रिक प्रेस, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित।

दो शब्द

लोककथा मानव जाति की परम्परा का अनमोल खजाना है। हजारों वर्षों के अनुभव इनमें संग्रहीत हैं। जब शिक्षा की सुविधाएं न थीं तो यही कथाएं नई पीढ़ी को शिक्षा देतीं और जीवन के कठिन सफर के लिए तैयार करती थीं। इन कथाओं की परम्परा आज भी वैसी ही चलती आ रही है। ये कथाएं बच्चों के प्रति वृद्धजनों का स्नेह प्रकट करने के साथ-साथ सीख देतीं और मनोविनोद करती हैं। ये कथाएं विदा हो रही पीढ़ी को नवागत पीढ़ी से मिलाती हैं और जब प्रौढ़ और युवक जीवन के धन्धों में व्यस्त होते हैं, वृद्ध और शिशु जीवन के गहरे तथ्यों का ताना-बाना इन कथाओं में बुनते हैं।

लोककथाएं समाज में कुछ इस भांति रच-बस गई हैं कि यह कहना कठिन है कि कोई कथा कहां से चल कर कहां पहुंची है। फिर भी इन्हें डुग्गर की लोककथाएं कहना इसलिए युक्तिसंगत प्रतीत होता है कि इनमें जैसे लोगों, स्वभाव अथवा वातावरण का उल्लेख है, वे प्रायः डुग्गर के पहाड़ों की विशेषता है। ये कथाएं कई प्रकार की हैं। सर्वप्रथम देव कथाएं हैं जिनमें देवता सत्पुरुषों पर कृपा करते हैं। डुग्गर की लोककथाओं में पार्वती का नाम पर्वतीय जनों पर विशेष अनुकम्पा के कारण सार्थक हो उठता है। 'प्रजा के भाग्य', 'मन का खोट' इसी प्रकार की कहानियां हैं।

चनेनी के पास सुद्ध महादेव और उसके निकटवर्ती स्थानों में शिव-पार्वती की बहुत सी कथाएं प्रचलित हैं, जिनमें सुद्ध का वध, शिव-विवाह, भैरव और हनुमान के चरित्र बड़े रोचक हैं। वहीं पर मद्र देश के लोक-हित पार्वती के देवक (एक नदी) रूप परिणत होने की कहानी सुनाई जाती है। राजा गोकर्ण की कथा की पृष्ठभूमि भी सुद्ध महादेव नगर है। डोगरी लोक साहित्यकारों ने झील मानसर और बभौर नगर का सम्बन्ध अर्जुन की पत्नी नाग कन्या उलूपी और उनके वीर पुत्र बभ्रुवाहन से बताया है।

दूसरी नीति-कथाएं हैं जिनमें सत्य और सदाचार पर अडिग रहने का उल्लेख है। राजकाज में भेद न खोलने और तप तथा त्याग की शिक्षा भी इन कथाओं से मिलती है। आपसी प्रेम और सहयोग से गड़े खजाने मिलते हैं।

परियों और दैत्यों की कहानियों में जान जोखिम के साहसिक कार्यों के बाद मर्त्य लोक का कोई व्यक्ति दैत्य को मार कर परी से विवाह करता है। ये कथाएं बाद की प्रतीत होती हैं और इनमें सूफी मत की विचारधारा की छाप है, जिसमें आराध्य को परी के रूप में मानकर तथा प्रलोभन रूपी राक्षस को मार कर बड़ी लगन से लक्ष्य पाने की चेष्टा करते हैं।

पशु-पक्षियों की डोगरी कथाएं बड़ी रोचक हैं। इनमें वे या तो नायक होते हैं, अथवा वे कथानक

में सहायक रूप में आते हैं। तोता-मैना की वार्ता बहुत-सी गुत्थियों और समस्याओं को सुलझा देती है। ये कथाएं रूपक की कसौटी पर पूरी उतरती हैं। इनमें शेर एक साधारण शासक के समान व्यवहार करता है, जब कि गीदड़ चापलूस, स्वार्थी दरबारी तथा हंस एक अच्छे मन्त्री और काक कुटिल मन्त्री की भूमिका में आते हैं।

इसके अतिरिक्त हास्यरस, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और प्रगतिवादी कथानक की लोककथाएं भी हैं। प्रस्तुत संग्रह में प्रत्येक प्रकार की एक-एक कथा देने की चेष्टा की गई है। डुग्गर में प्रचलित लोककथाओं का यह एक छोटा-सा संग्रह है इनमें ऐसी सामग्री भी है कि हंसते-हंसते पेट में बल पड़ जाएं और ऐसी भी कि बरबस संवेदना और दुख के आंसू आ जाएं। जहां कुछ लोगों की मूर्खता और उनके विचित्र व्यवहार पर हंसी आएगी, वहां दूसरों की चतुराई और बुद्धि-कौशल पर आश्चर्य भी होगा।

— बंसीलाल गुप्त

भूमिका

मनुष्य स्वभाव से कहानी प्रिय है। विशेषकर बच्चों को सिखाने-पढ़ाने का सर्वसुन्दर माध्यम कहानी है, उनकी कल्पना को ऊंची उड़ान देने का एक सहज साधन है। प्रसिद्ध डोगरी लोककथाओं का यह संग्रह इस उद्देश्य से निकाला गया है कि हमारे देश के बच्चे विभिन्न राज्यों की लोककथाओं से परिचित हों और अन्तर्राष्ट्रीय भावना बढ़े।

प्रत्येक देश के लोकजीवन और लोकवार्ता में अटूट सम्बन्ध है। लोकसाहित्य और लोकजीवन की परम्पराएं एक सी हैं। लोककथाएं अनेक रूपों में लोकजीवन पर छाई हुई हैं। अतएव इन लोककथाओं के द्वारा हमारे बच्चे अन्य राज्यों के लोकजीवन से परिचित होंगे। अनेक लोककथाओं का आधार एक दूसरे राज्यों की लोककथाओं से मिलता-जुलता है। जिस देश या प्रदेश में ये कहानियां पनपती हैं, वहां के लोकजीवन की छाप उन पर पड़ जाती है। जिस तरह ईंट-गारा सब जगह एक-सा है, पर रुचि और जरूरत के अनुसार मनुष्य मकान का आकार बना लेता है, उसी प्रकार लोककथाओं का रूप उभरता है।

लोककथाओं की शैली बहुत ही सुन्दर और सजीव होती है। इनके रचनाकारों और उनकी शैली पर मुग्ध होकर एक बार पं0 जवाहारलाल नेहरू ने कहा था—"मुझे कई बार इस बात पर आश्चर्य होता है कि ये आदमी और औरतें, जिन्होंने कि ऐसे सजीव सपनों और कल्पनाओं के सहारे ऐसे अद्‌भुत और दिलचस्प कथानक संजोए हैं, कैसे होंगे और विचार और कल्पनाओं की किस सोने की खाने में से खोदकर उन्होंने ऐसी चीजों को निकाला होगा?"

लोककथाएं सदियों से मनुष्यों का मनोरंजन करती आई हैं। आशा है यह पुस्तक भी अपने इस ध्येय को पूरा करने में सफल होगी। आजकल गांवों में पुस्तकालय खुल रहे हैं। उनके लिए रोचक कथा साहित्य की बड़ी मांग है, उसकी पूर्ति भी इस प्रकार के कथा साहित्य से हो सकेगी।

विषय-सूची

1. शेर का दिल 1
2. मन का खोट 5
3. नागिन का बदला 8
4. प्रजा के भाग्य 11
5. पूजा का अधिकार 13
6. वर का चुनाव 16
7. पंछी की सीख 20
8. मां की आशीष 22
9. बाघ और गीदड़ 24
10. आलसी परिवार 28
11. कुबड़े को लात 30
12. आदमी का मोल 32
13. जाहता भूत 36
14. भाग्य का खेल 40
15. नाम में क्या है? 45
16. सोनपरी 48
17. राजा की पगड़ी 51
18. कुल की मर्यादा 53
19. धुनिए के चार हाथ 56
20. चार चतुर चोर 60

शेर का दिल

एक ब्राह्मण था। वह अपने जीवन से बड़ा दुखी था। घर में कुछ खाने को न था। स्वयं क्या खाता दूसरों का क्या खिलाता? नाते-रिश्तेदार भी धनवान के बनते हैं। जब वह बहुत घबराया तो घर से निकला कि कहीं भाग जाए, किसी नरभक्षी पशु का आहार बन जाए। इसी सोच में डूबा हुआ वह घने जंगल की ओर निकल गया।

शाम होने को आई। वह पेड़ के नीचे बैठ गया। उसने सोचा कि अभी कोई हिंसक पशु आएगा जो अपनी भूख मिटाने के साथ मेरी जीवन-लीला खत्म करके सारे क्लेश भी दूर कर देगा।

उसी समय उसने देखा कि सामने एक गुफा में से शेर निकला। शेर कुछ रूका। पेड़ पर उसका मन्त्री हंस बैठा था जो अपनी बुद्वि, अपने शील-स्वभाव और दूध का दूध और पानी का पानी करने के लिए जग-प्रसिद्ध है।

शेर ने कहा—दीवानजी! आज तो शिकार स्वयं ही सामने आ गया।

हंस ने ब्राह्मण को देखा और सोचने लगा, पता नहीं यह कौन दुखी आदमी है। शेर ने कितने ही जीव मार डाले, आज इस ब्राह्मण को क्यों न बचाऊं? फिर शेर से बोला—मृगराज! यह ब्राह्मण आपका कुल पुरोहित है, आपको ढूंढता-ढूंढता यहां आया है। आपके पूर्वज इनका बड़ा सत्कार करते थे। जाओ, देखते क्या हो, प्रणाम करो। देखना उसे कोई कष्ट न हो। उलटे कुछ सम्पति दो। क्या याद करेगा कि आपके पास आया था।

शेर भी अपने मन्त्री की बात मानता था। झट से गया और ब्राह्मण के पैर छुए और उसे गुफा में ले आया। शेर ने उसकी आवभगत की और फिर एक जगह दिखा दी जहां से ब्राह्मण ने धरती खोदकर दौलत पाई और शेर से अनुमति ले घर लौट आया।

धन-दौलत मिल जाने से ब्राह्मण का दुख-दरिद्र जाता रहा। अब उसका रहन-सहन भी अच्छा हो गया। घर में पशुधन, धन-धान्य आ गया। अब वह प्रायः शेर के पास जाता और हर बार कुछ-न-कुछ ले आता। इस प्रकार वह काफी अमीर हो गया।

एक दिन ब्राह्मण की स्त्री ने कहा—तुम रोज कहते हो कि हमारा नया यजमान बहुत अच्छा है, कभी उसे अपने घर तो बुलाते। इस महीने यजमान गुरु के घर का अन्न खाते हैं, तुम भी उसे निमन्त्रण दो।

बात ब्राह्मण को जंच गई और वह शेर के पास गया और उसे खाने का न्योता दिया।

शेर ने कहा—रहने दो, हम हुए जंगली जानवर। रात अंधेरे में ही आ सकते है। तुम्हें बड़ी असुविधा होगी।

पर ब्राह्मण ने आग्रह किया और शेर ने उसके घर जाना स्वीकार कर लिया। एक दिन ब्राह्मण शेर को अपने साथ ले आया। उसने अपने इस विचित्र यजमान की बड़ी कदर की, पर नई-नई सम्पति पाकर ब्राह्मण की स्त्री को बड़ा गर्व हो गया था। उसने बहुत से पकवान बनाए थे। जब उसने शेर को देखा तो पहले डरी, फिर कुछ घबराई और उसे कुछ सुझाई न दिया कि क्या करे। ब्राह्मण ने समझाया—यह कुछ नहीं कहेगा, डरो मत। इसी की कृपा से हमारे दिन फिरे हैं।

जब वे भोजन के लिए बैठे तो ब्राह्मणी ने अपनी नाक कपड़े से बन्द की ली। उसे शेर से बहुत

दुर्गन्ध आ रही थी। जब खा चुके तो उसने कहा—अच्छा है तुम्हारा यजमान। मुह से वह दुर्गन्ध आ रही थी कि मेरी नाक भी सड़ गई।

शेर ने यह बात सुन ली और धीरे से जंगल को निकल गया। कुछ दिन बाद ब्राह्मण फिर शेर के पास गया तो देखा, शेर के तेवर बदले हुए थे। शेर ने कहा—पुरोहित जी। यह लो खड्ग और मारो मेरे सिर पर।

ब्राह्मण ने कहा—क्या बात है महाराज। आज आप कैसी बातें कर रहे हैं।

शेर बोला—नहीं, आज तुम्हें खड्ग का वार करना ही पड़ेगा।

ब्राह्मण ने कहा—नहीं, यह काम मुझसे नहीं होगा।

शेर गरजा—देखता हूं तुम कैसे नहीं करोगे।

ब्राह्मण डर गया और उसने खड्ग उठाया और धीरे से शेर के सिर पर लगा दिया। धार तेज थी, कुछ खून बह निकला। ब्राह्मण हैरान हुआ अपने घर लौट आया।

कई दिन बीत गए। ब्राह्मण डर के मारे उधर न जाता। वह समझा कि शेर पागल हो गया है,

पता नहीं अब उसका क्या हाल होगा और अगर मैं गया भी तो न मालूम अब के क्या कहे।

उधर शेर के मन्त्री हंस को किसी शिकारी ने मार डाला। शेर ने कौए को नया मन्त्री बनाया। कौए ने अपनी मति के अनुसार शेर को सलाह दी और अपने ढंग पर उसे चलाया।

कई महीने बीत गए, ब्राह्मण को फिर धन की आवश्यकता हुई। उसने पुनः शेर के पास जाने की सोची और एक दिन वह जंगल की ओर गया।

शेर की गुफा के बाहर पास के पेड़ पर कौआ बैठा था। उसने जोर से काँव-काँव करना शुरू किया और इस प्रकार शेर को सूचित किया की शीघ्रता करो, शिकार फंसा है। शेर ने बाहर आकर देखा उसका अपना पुरोहित है। उसे हंसी आ गई। ऐसे ही एक दिन हंस ने भी उसके आने की सूचना दी थी।

ब्राह्मण को शेर के पास बिना संकोच बैठे और बातें करते देख कौए को बड़ा आश्चर्य हुआ, वह तो उसके मारे जाने की ताक में था। शेर ने ताड़ लिया और ब्राह्मण से कहा—देखो भला, मेरे सिर पर जो तुमने प्रहार किया था, उसका क्या हाल है?

ब्राह्मण ने देखा और कहा—महाराज! वह तो अब पूरी तरह भर गया है, अब ठीक है।

शेर ने कहा—खड्ग का घाव ठीक हो गया, परन्तु जो कुछ तुम्हारी पत्नी ने मेरा अपमान किया था, उसका जख्म अभी भी हरा है। वह नहीं भरा।

ब्राह्मण के तो जैसे पांव के नीचे की मिट्टी निकल गई, वह चुप हो गया। शेर ने कहा—डरो नहीं, असल में यह है:-

हंसा थे सो चल बसे, काग बने दीवान।

जाओ ब्राह्मण घर अपने, शेर किसका यजमान?

—पता नहीं यह कौआ क्या पाप करा दे, अब तुम यहां मत आना। ब्राह्मण ने सोचा जान बची लाखों पाए।

फिर उसे आवश्यकता हुई तो भी उसने मुंह उधर न किया।

मन का खोट

वह निखट्टू था अथवा नहीं, पर लोगों ने उसे कह-कह कर निखट्टू ही बना दिया। हर समय वह निकम्मा घर पर बैठा रहता, न काम करता न कमाता। होते-होते घर का सारा सामान भी बिक गया और फाकों की नौबत आ गई।

उसकी स्त्री भी क्या करती, खाने पीने का खर्च कहां से आता? आखिर जल-भुन कर उसने निखट्टू से कहा—सारी दुनिया कमाती है, तेरे लिए कोई काम ही नहीं रह गया? जा चोरी ही कर। पेट तो किसी तरह भरना ही है।

वह घर से चला। गांव से बाहर निकलते ही उसे एक बड़ी अच्छी गाय मिली, जो गाभिन थी। वह गाय हांक कर घर ले आया। पत्नी से बोला—यह ले गाय, इसकी सेवा कर, जब बछड़ा होगा तो दूध देगी।

पत्नी ने गाय की खूब टहल की, घास-पानी देती रही और थोड़े दिनों में गाय ने बछड़ा दिया। गाय दूध देने लगी। पर उसका दुर्भाग्य! घर के सामने ही कुम्हार का घर था। जब निखट्टू और उसके घर वाले दूध दुहते तो कुम्हार का एक बीमार गदहा रेंकने लगता और गाय डर कर दूध चढ़ा लेती। जो कुछ दूध दिया भी होता, उसे भी लात मार कर गिरा देती। रोज यही होता। सवेरे या सांझ जब भी दूध दुहते गदहा रेंकता।

निखट्टू ने सोचा परमेश्वर ने गाय दी पर यह गदहा बैरी हो गया। हमको गाय का सुख नहीं लेने देता। इसने बड़ा दुख दिया। कुम्हार के साथ उसके सम्बन्ध अच्छे न थे, कई बार लड़ाई-झगड़ा हो चुका था। उठना-बैठना दूर रहा, बोल-चाल भी न थी।

बहुत दुखी होकर उसने भगवान से प्रार्थना की—मालिक! तू इस गदहे को मार, इसने मुझे बहुत दुख दिया। इसकी गति कर जिससे हमारा भी छुटकारा हो।

विधाता की करनी! दूसरे दिन गाय को सांप ने काट लिया और वह मर गई।

निखट्टू बड़ा दुखी हो गाय के शोक में बैठा था। उसे बड़ा क्लेश हुआ । गाय आई तो दूध न मिल सका, शायद दूध कभी मिल भी जाता, परन्तु गाय के मर जाने से सारी आशा ही जाती रही।

उसी समय उधर से शिव-पार्वती गुजरे। पार्वती ने शिवजी की ओर देखा और पूछा—महाराज! यह आदमी किस सोच में घुल रहा है?

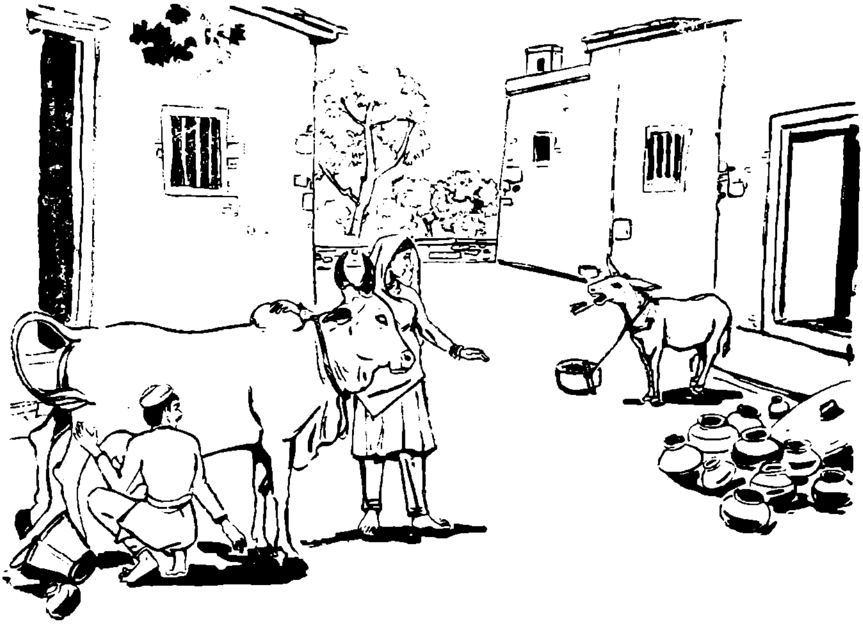

शिवजी ने उससे पूछा—भले आदमी, तुम्हें क्या सोच है?

निखट्टू जला-भुना था ही, बोला-तुम जाओ अपने रास्ते।

शिव बोले—बता तो सही, तुझे इतना क्या शोक है? परमेश्वर सबकी सुनता है।

निखट्टू ने कहा—सुनता है सिर अपना, मुझे मिले तो उसे मजा चखा दूं।

शिवजी ने कहा—पर बात क्या है? भाई बता तो। दुख सुना कर दुख कम होता है।

निखट्टू बोला—बड़ा परमेश्वर का सगा बना है। उसे तो इतनी भी पहचान नहीं कि गदहा कौन है और गाय कौन। मैंने उसे गदहा मारने के लिए कहा था, वह आकर गाय को मार गया। निखट्टू ने एक सांस में सारी बात सुना दी।

शिव बोले—चल पार्वती यहां से।

पार्वती बोली—महाराज, चलें तो सही, परन्तु पहले इस बेचारे का भी कुछ करो।

शिव बोले—गौरी ! चल, यह आदमी भला नहीं है।

पर पार्वती भला क्यों चलतीं। उन्होंने आग्रह किया और शिवजी को आखिर कहना पड़ा, भई, जा घर और जो कुछ तू मांगेगा वही तुझे मिल जाएगा, परन्तु याद रख कि तेरे पड़ोसी को उससे दुगुना मिलेगा। वे मेहनती हैं, उनका परिवार भी बड़ा है, सन्तोष रखना।

निखट्टू ने क्रोध में आकर कहा—तू जा-जा, अपना रास्ता सम्भाल। देखा जाएगा।

लेकिन घर आकर उसने उसांस भरी और मांगा। मेरी गाय मिल जाए। देखते-देखते उसके घर वैसी ही गाय आ गई। पर कुम्हार के घर की ओर उसने देखा, वहां वैसी ही दो गायें खड़ी थीं।

उसने कहा—मेरे घर आटे की दो बोरियां आ जाएं। बोरियां आ गईं, पर कुम्हार के यहां चार बोरियां पहुंच गईं। उसने एक घोड़ा मांगा। कुम्हार के दो आ गए। उसने एक हवेली मांगी तो कुम्हार की दो हवेलियां बन गईं।

पहले तो उसनें खूब खाया, पहना। पहली बार मन भाता खाया, उसका मन बड़ा प्रसन्न था, परन्तु उसे कुम्हार का अमीर होना न भाया। इस बात का उसे बड़ा दुख था और इसी ईर्ष्या से वह जल उठा। आखिर उसने जल-भुन कर अपनी स्त्री से कहा—

भलीमानस, तू फिकर न कर, देख मैं उसका इलाज करता हूं।

यह कह कर उसने कहा—मेरे घर के द्वार पर एक कुआं बन जाए। कुम्हार के द्वार पर दो बन गए। उसने कहा-मेरे परिवार के सभी लोगों की एक-एक आंख कानी हो जाए, उधर कुम्हार का सारा परिवार अन्धा हो गया और बारी-बारी उसके घर के सभी व्यक्ति कुम्हार समेत कुओं में जा गिरे।

अब निखट्टू को शान्ति हुई।

आकाश पर यह देखकर शिव बोले—देखा पार्वती, यह आदमी मन का बड़ा खोटा है। आगे से मदद ऐसे ही आदमी की करनी चाहिए जो दूसरों का बुरा न चाहे।

नागिन का बदला

राजा का दरबार लगा था, सभासद अपने-अपने स्थान पर बैठे थे और गाना सुन रहे थे कि अचानक सभा में खलबली मच गई—कहीं से एक भयंकर नाग आ गया था और सिहांसन पर आसीन राजा की ओर तेजी से बढ़ता जा रहा था। कुछ लोग चिल्लाए, कुछ छिप गए। अन्य कुछ अवसर पा खिसक गए और राजा स्वयं सिंहासन की ओट में खड़ा हो गया।

राजा ने चिल्लाकर कहा—अरे, कोई है जो मुझे इस नाग से बचाए!

उसी समय युवराज ने आगे बढ़कर तलवार उठाई और सांप के दो टुकड़े कर दिए। सभी की जान में जान आई। राजा फिर से सिंहासन पर आ बैठे। सभासद भी अपने-अपने स्थान पर आ गए। सभी युवराज की प्रशंसा कर रहे थे। राजा ने अपने गले से मोतियों का हार उतार कर युवराज के गले में डालना ही चाहा था कि फिर से शोर हुआ 'सांप' 'सांप'। एक अन्य विषधर फुंफकारता हुआ बड़े वेग से सभा में आया और आन की आन में वह युवराज के गले में लिपट गया। सभा में हाहाकार मच गया।

यह नागिन थी। उसने राजा को सम्बोधित करते हुए कहा—महाराज ! आप तो न्याय का दम भरते हैं, मेरा नाग आपसे न्याय मांगने आया था और आपने उसे कुछ कहने का अवसर दिए बिना मरवा डाला। यह कहां की राजनीति है?

राजा ने कहा—बताओ तुम्हें क्या चाहिए। हम तुम्हारा न्याय करेंगे। मेरे पुत्र को छोड़ दो।

नागिन बोली—नहीं राजा ! मेरे सारे पहले दुख भूल गए हैं। पति वियोग से बढ़कर कौन दुख हो सकता है ? इस समय मेरी देह प्रतिहिंसा की आग में जल रही है। यदि किसी ने मेरी ओर कदम भी बढ़ाया तो मैं राजकुमार को तत्काल डस लूंगी।

राजा ने कहा—तुम जो चाहो ले लो, हमारे एकमात्र पुत्र को छोड़ दो।

नागिन ने कहा—मुझे अब कुछ नहीं चाहिए। मैं तो यही चाहती हूं कि इस हत्यारे राजकुमार की वधू को भी वही शोक हो जो इस समय मुझे जला रहा है और मेरे चार नन्हें बच्चों का क्या होगा जब वे अपने पिता के मारे जाने का समाचार पाएंगे। अब मैं भिक्षा नहीं न्याय चाहती हूं। जब तक मेरा न्याय नहीं हो जाता, मैं राजकुमार को छोड़ नहीं सकती। मेरे प्रतिशोध की ज्वाला तभी शांत होगी जब तेरी पुत्रवधू अपने पति के और उसके बच्चे अपने पिता के शोक से संतप्त होंगे।

किसी ने सलाह दी कि नागिन को मार दिया जाए। परन्तु किसी का साहस न हुआ क्योंकि राजकुमार का जीवन खतरे में था।

नागिन उनके मन की बात भांप कर बोली—राजन्, सुन लो, हमारे कुल के नाग बड़े भंयकर हैं, यदि मेरा न्याय न हुआ, तो वे एक-एक से बदला लेंगे।

सभी सहम गए और राजकुमार असहाय नागपाश में बंधा था। उसी समय राजा के एक मन्त्री ने नागिन का पक्ष लेते हुए कहा—राजन्, अपने पति का बदला लेने का नागिन को पूरा अधिकार है। उसके साथ अवश्य न्याय होना चाहिए।

फिर नागिन को सम्बोधित करते हुए मन्त्री ने कहा—नागिन, तुम राजकुमार को डस सकती हो, परन्तु उसी समय जब उसके भी चार पुत्र हो जाएं। तुम्हें तो पूरा न्याय उसी समय मिल सकेगा जबकि राजवधू भी अपने चार बच्चों सहित तड़पेगी।

नागिन निरुत्तर थी। उसने हामी भरी कि वह तीन-चार वर्ष प्रतीक्षा करेगी। वह राजकुमार के गले से उतर कर धीरे-धीरे चली गई।

अब राजकुमार को मौत का डर रहता था। पहले तो उसने राजपाट छोड़कर जंगलों में संन्यासी बन कर रहने का निश्चय किया, परन्तु मन्त्री की राय से उसने घर में ही रह कर संन्यासी की भांति रहने का निर्णय किया। उसके न तो चार बच्चे हुए और न ही नागिन को बदला लेने का अवसर मिला।

कहते हैं कि मौत के भय ने राजकुमार का जीवन ही बदल दिया और उसने अपने शासन में प्रजा की भलाई के लिए अनेक कार्य किए।

लोग राजा की सराहना के साथ-साथ नाग पूजा भी करने लगे।

प्रजा के भाग्य

बहुत दिनों की बात है कि किसी देश पर विधाता का कोप हुआ और वहां बारह वर्ष के लिए सूखा पड़ गया। शिवजी ने भी अपनी भेरी सम्भाल कर कौपीन के साथ बांध दी, क्योंकि उन्हें बारह वर्ष उसकी आवश्यकता नहीं थी, वर्षा तो तभी होती अगर शिव भेरी बजाते।

अम्बर इस प्रकार सूख गया, जैसे किसी निर्दयी व्यक्ति की आंख। तालाबों, झरनों, कुंओं का पानी और पानी के स्रोत सूखने लगे। दो-तीन वर्ष लगातार श्रावणी और आषाढ़ी दोनों फसलें न होने से चारों ओर हाहाकार मच गया। पेड़-पौधे, लताएं-कुंज सूख गए। हरी-भरी पर्वत श्रेणियां और लहलहाते खेत वीरान हो गए। कुछ वर्ष इसी विपत्ति में बीत गए। पशु-धन भी पानी और घास के बिना दिन-दिन घटता गया। मनुष्य भी तड़प-तड़प कर मरने लगे। जो कहीं बचे रहे, वे सूखकर अस्थि-पिंजर से रह गए। ऐसा प्रतीत होने लगा कि बारह वर्ष के भीतर इस देश से सभी जीव नष्ट हो जाएंगे और विधाता को वहां फिर से मनुष्य, पशु और पेड़-पौधों की रचना करनी पड़ेगी।

एक दिन शिव और पार्वती कैलाश पर्वत से आकाश में यात्रा करते-करते उस देश पर से गुजरे, जहां अकाल और सूखे के कारण चारों ओर विनाश का दृश्य बना था। ऐसा सूखा और उजाड़ देश देखकर पार्वती को बड़ा अचम्भा हुआ और शिवजी से कहने लगी—महाराज ! यह क्या? यह कैसा देश है, जहां हरा पत्ता नहीं, तालाबों में कीचड़ भी सूख कर फट गया है। यहां रहने वाले लोगों का क्या हाल होगा? यहां तो चलता-फिरता जीव भी दिखाई नहीं देता। बात क्या है? मुझे भलीभांति याद है कि हम पहले भी एक बार इसी रास्ते आए थे, तब तो यहां बड़ी शोभा थी, हरियाली थी। और महाराज! देखिए, वह धरती पर क्या हिल रहा है, उधर सूखे खेत के बीच!

शिव हंसे और कहने लगे—अरी ! यह संसार है। यहां परिवर्तन होते रहते हैं, इनका क्या कहना। चलो, हम जिस काम पर निकले हैं ...।

पर कहां? पार्वती ठहरी स्त्री और स्त्री की हठ। उसने निश्चय कर लिया कि जब तक सारी बात न जान लेगी, तब तक एक पग भी न बढ़ाएगी। शिवजी को कहना पड़ा—पार्वती ! इस देश पर बारह वर्ष अकाल रहना है। यहां अभी और कुछ वर्षों तक वर्षा की बूंद नहीं पड़ेगी। यह देश सूख जाएगा, यहां के लोग कुछ मर गए, जो बचे हैं वे भी सिसक-सिसक कर मर जाएंगे।

पार्वती ने आह भरी और पूछने लगी—महाराज ! सूखे और अकाल की बात तो हुई, परन्तु वह क्या चीज हिलती हुई दीख रही है ?

शिव बोले—पार्वती ! यह कोई बेचारा दुखी किसान है और वे उसके खेत हैं। उसे मालूम है कि बिना बरसे हल चलाने का कोई लाभ नहीं, पर बेचारा यह सोचकर कि उसके बाद भाग्य से अगर कोई बच गया तो हल चलाने का ढंग न भूल जाए, अपने इन भूखे प्यासे और कमजोर बैलों को लेकर कृषि की परम्परा को मिटने से बचाने का यत्न कर रहा है।

यह सुनकर पार्वती का गला भर आया और चिन्तित होकर पूछने लगी—महाराज! तो फिर बारह वर्ष तक आप को भी अपनी भेरी नहीं बजानी होगी। और अगर बारह वर्ष के बाद आप भी भेरी बजाने का तरीका भूल गए तो ?

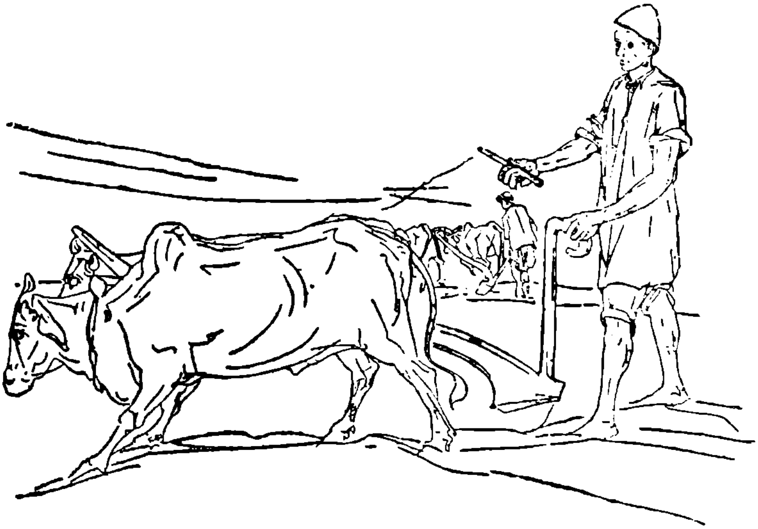

शिव तो भोलेनाथ कहलाते ही हैं। पार्वती की बात जंच गई। हाथ में भेरी लेकर कहने लगे—गौरी! इन चार वर्षों में ही कहीं भूल न गया होऊं । देखूं भला !

शिवजी ने भेरी होठों से लगाकर जोर से जो फूंक मारी तो पहाड़ की ओट से काले बादल आकाश पर घिर आए और वह वर्षा हुई कि जल थल एक हो गया। मुरझाए पेड़-पौधों और लताओं-झाड़ियों में जान आ गई और भूख से दुखी जनों की आंखों में आशा चमक उठी।

पार्वती ने हंसते-हंसते शिवजी की ओर देखा और पूछने लगी—महाराज यह क्या ? आप तो कहते थे, इस देश पर बारह वर्ष अकाल और सूखा रहेगा—और यह वर्षा!

शिव हंस पड़े और यह कहने लगे—पार्वती, प्रजा के भाग्य न्यारे। यह कृषक की साधना का फल है। इसके आगे विधाता का विधान भी बदल जाता है।

पूजा का अधिकार

जम्मू से कोई 105 किलोमीटर दूर रामनगर की सुन्दर बस्ती के मूक खंडहरों में आज भी अतीत की रोचक और गौरवमय कहानियां गुथी हुई हैं। नगर के उत्तरी भाग में एक हरा-भरा मैदान है, जिसके मध्य में एक सुदृढ़ दुर्ग, रानियों की कुछ समाधियां, एक बड़ा तालाब और एक ओर बड़ा रमणीय बाग है। कहते हैं कि उसी चौगान में कभी एक कच्चा तालाब था जो ध्रुव नामक ब्राह्मण की भूमि में बना था। यह बात उन दिनों की है जब रामनगर को बादरालता कहते थे और वहां राजा भूदेव का राज्य था।

एक बार राजा ने तालाब में कमल लगवाए। समय पाकर तालाब में कमल की कलियां खिल उठीं।

बादरालता में उन दिनों भी आज की भांति भगवान नृसिंह की बड़ी मान्यता थी। नगर के पूर्व में पहाड़ी पर स्थित मन्दिर में सदा श्रद्धालुओं की भीड़ रहती। भगवान नृसिंह की मूर्ति पर पहला खिला हुआ कमल चढ़ाने के अधिकार पर राजा भूदेव और ध्रुव में विवाद होने लगा। राजा का कहना था कि राज्य का शासक होने के नाते मन्दिर में पहला कमल चढ़ाने का अधिकार उसी को है।

उधर ध्रुव भी हठी ब्राह्मण था और उसका कहना था कि चूंकि फूल उसी के तालाब में खिला है, इसलिए वह ही पहला फूल भगवान नृसिंह पर चढ़ाएगा।

विवाद से दूसरे दिन प्रातः जब कि कुछ घड़ी रात बाकी थी, ध्रुव उठा, तालाब पर गया और उसने पहला फूल, जो सूर्योदय न होने के कारण अभी अध-खिला ही था, तोड़ा और मन्दिर में चढ़ा आया।

राजा की इच्छा और उसके संकल्प की परवाह न करना हिम्मत का काम था। इस पर राजा की प्रतिक्रिया की कल्पना की जा सकती है। शासक के लिए क्या मुश्किल है।

राजा ने फूल चढ़ाने की बात सुनी तो क्रोध से कांप उठा और आदेश हुआ—उस दरिद्र ब्राह्मण की यह हिम्मत। उसे मेरे सामने उपस्थित करो।

आदेश मिलते ही प्यादे ध्रुव को पकड़कर ले आए। उसे देखते ही राजा की आंखों से अंगारे से निकलने लगे और उसने गरज कर कहा—ले जाओ इस कुब्राह्मण को और पैरों में रस्सी बांध कर इसे सारे नगर में घसीटा जाए।

बूढ़ा ब्राह्मण यह यातना सहन न कर सका और थोड़ी दूर घिसटने पर ही मर गया।

नगर के पश्चिम की ओर नाले के पार खींह नाम का गांव है। भूदेव का मन्त्री वहां रहता था और शाम का भोजन राजा के साथ किया करता था। उस दिन सन्ध्या को वह महल की ओर आ रहा था, अन्धेरा हो चला था। इतने में वजीर क्या देखता है कि एक आदमी हाथ में मशाल लिए आ रहा है। पास आने पर देखा कि वह ध्रुव था। मन्त्री ने हंसते-हंसते पूछा—पण्डितजी, इस समय रात में कहा जा रहे हैं ?

उत्तर मिला—कहीं नहीं, मन्त्रीजी, राजा से कहना मैं भी आ रहा हूं, भात एक साथ खाएं।

—जरूर आइए, आपको किसने रोका है। यह कहते हुए मंन्त्री आगे बढ़ गया।

महल में भोजन परोसे जाने पर मन्त्री ने ध्रुव का सन्देश भी सुनाया।

राजा ठहाका मार कर हंसा। उसने ध्रुव को दिए गए मृत्यु दण्ड के बारे में सब सुनाया।

मन्त्री अचम्भे में पड़ा। सांस रुक गई। सुनी हुई बात को सच माने या आंखों देखी बात को? उसकी आंखों में अन्धेरा छा गया। दिल दहल उठा। ब्राह्मण की हत्या का परिणाम अब क्या होगा।

राजा ने बांह से पकड़ कर मन्त्री को झकझोरा—वजीर जी, भात खाओ, ध्रुव नहीं आ सकता।

मन्त्री सिहर उठा, उसकी दृष्टि अपने नहीं, राजा के भोजन पर पड़ी, जहां उसे भोजन में बिलबिलाते कीड़े तथा व्यंजनों के स्थान पर कटोरों में खून दिखाई दिया।

राजा भी यह सब देख सहम गया।

शोक-संताप और विह्लता के वेग से अब राजा का शरीर जलने लगा। कुछ ही क्षणों में वह भूमि पर लेट गया। महल में कोहराम मच गया। वैद्य, पंडित और झाड़फूंक करने वाले बुलाए गए। परन्तु राजा को किसी भी प्रकार आराम न हुआ। दो एक दिन में राजा की दशा बिगड़ गई। ध्रुव का हंसता हुआ चेहरा उसके सामने घूमता रहता। अन्त में किसी सयाने व्यक्ति ने कहा कि राजा पर ब्रह्महत्या का दोष है। शायद, वह तभी दोषमुक्त हो जब ध्रुव का मन्दिर बनवाकर, उसके चारों ओर राजा को वैसे ही रस्से से बांधकर घसीटा जाए जैसे ध्रुव को नगर भर में घसीटा गया था। ऐसा ही किया गया। नगर से बाहर जंगल में मंदिर बना, उसमें ध्रुव की मूर्ति की स्थापना हुई और राजा को बांधकर उसके चारों ओर घसीटा गया। ऐसा माना गया कि इससे राजा को सुख मिलेगा।

राजा के बाकी दिन यातना में कटे। सुबह-शाम रोज राजा को वहां पर घसीटा जाता। कुछ ही दिनों में जख्मों से निढाल होकर राजा मृत्यु को प्राप्त हुआ।

समय बीतने पर ध्रुव का मंदिर धरती में धंस गया, ध्रुव की वह मूर्ति, भक्ति और बलिदान के प्रतीक के रूप में आज भी रामनगर के नऊजी मंदिर में पड़ी भक्तों को प्रेरणा देती है।

वर का चुनाव

बहुत पुरानी बात है कि किसी की कन्या विवाह योग्य हुई, और कई जगह उसकी शादी की बात चली। वह कन्या थी भी बहुत सुन्दर, बुद्धिमती और गुणवती। उसके लिए पिता ने एक लड़का चुना, पर वह उसकी मां को नहीं भाया। जो मां ने चुना, वह लड़की के बड़े भाई को पसन्द न था। उसने अपनी ओर से किसी और को ही वचन दे दिया। घर में कलह हो गई। सभी अपनी-अपनी जिद्द पर अड़े रहे और विवाह की अलग-अलग तैयारियां करने लगे।

तीनों जगह ब्याह का मुहूर्त भी एक ही निकला और जिस दिन विवाह की तिथि थी उस दिन उसे ब्याहने के लिए दरवाजे पर तीनों बारातें पहुंच गई।

घर-घर में चर्चा होने लगी। ऐसी अनहोनी घटना किसी ने कभी देखी-सुनी न थी। लड़की ने जब अपनी बदनामी होते देखी तो उससे रहा न गया और उसने छत से छलांग लगाकर जान देदी और जहां उसके विवाह के सुहाग-गीत हो रहे थे, वहां रोना-पीटना मच गया।

उधर जो लोग बारातें लेकर आए थे, वे भी बड़े दुखी और शोकातुर हुए, असुविधा और मानहानि तो हुई ही, साथ में लोगों ने काफी बातें बनाई और उनकी हंसी उड़ाई।

तीन वरों में से एक लड़की वालों के घर गया और शोक प्रकट कर अपने घर लौट गया। दूसरे को कुछ अधिक शोक हुआ, लड़की का अन्तिम संस्कार किया और कुछ दिन मातम करके अपने घर लौट गया। तीसरे ने उससे भी अधिक शोक किया, और उसकी चिता की भस्म लेकर साधु बन गया तथा घर-बार छोड़कर वन की राह ली।

कई वर्ष बीत गए। एक बार कोई महात्मा उस वन में आया जहां भस्म की पोटली लिए वह साधु रहता था। बातों-बातों में उसने सारी घटना उस महात्मा को सुना दी।

महात्मा ने कहा कि अगर उसकी भस्म हो तो उसे पुनः जिलाया जा सकता है।

उसने पोटली निकाल कर महात्मा के आगे रख दी। महात्मा ने उस पर अमृत छिड़का और मन्त्र पढ़े, जिससे वही लड़की अपने ब्याहते कपड़ों में वहां प्रकट हुई और यह सब देखकर चकित हुई कि उसके लिए मानो कुछ हुआ ही न था। उसने अपने घर जाने की इच्छा प्रकट की । साधु बना हुआ उसका वर उसे उसके घर ले गया।

उसके घर पहुंच कर साधु ने कहा—अब इस लड़की का विवाह मुझ से कर दो, इसे मैंने ही जीवित

कराया है और अगर मैं न होता तो इसको पुनः जीवन न मिलता।

यह बात घर के लोगों को जंच गई और फिर से उसके विवाह का काम शुरू हो गया। घर में कलह और विरोध का फल उन्होंने पा लिया था, अबके उन्होंने कोई झगड़ा न किया।

उधर यह समाचार इन दोनों व्यक्तियों ने भी सुना जो उसे ब्याहने के लिए पहले भी आए थे। अब की बार भी आ धमके और कन्या पर अपना-अपना अधिकार जमाने लगे।

एक ने कहा—इसका संस्कार मैंने किया था, अस्थियां हरिद्वार में ले गया था, इसका पति बनने का अधिकारी मैं ही हो सकता हूं।

दूसरे ने कहा—मेरा भी अधिकार है, मैंने कौन सी दूसरी शादी कर ली ?

मामला उलटा हो गया, फिर से वही समस्या खड़ी हुई। कोई रास्ता न दिखाई देता था कि झगड़े का समाधान किस प्रकार हो। झगड़ा शुरू करना आसान है परन्तु उसे निपटाना बहुत कठिन।

अन्त में यह तय हुआ कि यह झगड़ा पंचायत में पेश हो। सभी ने पंचायत में अपनी-अपनी सुनाई। सरपंच भी सोच में पड़ गया। बहुत सोच-विचार के बाद उसने एक को बुलाया और उससे कहा—तुमने उस कन्या का अन्तिम संस्कार किया ?

—जी , हां।

—हरिद्वार भी तुम ही गए ?

—हां, महाराज।

—इस लड़की का विवाह तुम से नहीं हो सकता।

—दूसरे को बुलाकर कहा— इसकी भस्म लेकर साधु कौन बना ?

—श्रीमान, मैं।

—महात्मा किसे मिला था ?

—जी, मुझे। मैंने ही कन्या को जीवित करने के लिए महात्मा से विनय की थी। मैं न होता तो वह कभी भी जीवित न हो सकती थी।

सरपंच ने कहा—अच्छा !

फिर तीसरे को बुलाकर उससे भी बात पूछी—उसने शोक प्रकट करने के अतिरिक्त कुछ किया ही न था।

सरपंच ने लड़की को बुलाया और उसका हाथ तीसरे के हाथ में दे दिया और कहा—लो, यह तुम्हारी पत्नी होगी।

सबको यह निर्णय अद्‌भुत लगा, वे बड़े चकित हुए।

सरपंच ने कहा—जिसने संस्कार किया उसने संतान का कर्तव्य किया और जिसने नया जीवन दिया उसने माता-पिता का कर्तव्य निभाया। दामाद कौन सा काम करता है ?

कहते है कि वह तो तिनका तक नहीं तोड़ता। और यह बात तो तीसरे ने ही की। मैं क्या कहूं यह तो संयोग है कि क़न्या उसे मिली जिसकी हींग लगी न फिटकरी।

यह बात सब को जंच गई और उस लड़की का विवाह तीसरे से सम्पन्न हो गया।

पंछी की सीख

एक राजा और एक थी उसकी रानी। रानी स्वभाव की बड़ी सख्त थी, उसे नित नई फरमाइश करने के सिवाय और कुछ सूझता ही न था। राजा उसके आगे कुछ भी न बोल पाता। कई बार तो उसकी फरमाइश पूरी करते-करते राजा तो राजा, लोगों को भी बेहद परेशानी होती।

एक दिन रानी ने कहा—महाराज ! एक ऐसा महल बनवा दो जिसमें केवल पक्षियों के पंख ही लगे हों।

राजा सोच में पड़ गया। लाखों जीवों की हत्या होगी। उधर रानी क्रोध से बिफरने लगी।

राजा ने हार मानी और मन मार कर पक्षियों के राजा को बुला भेजा। सन्देश गया, पर पक्षिराज भी बड़ा चालाक था, समझ गया कि दाल में कुछ काला है। कहते भी हैं कि पक्षियों को विपत्ति आने का भास पहले हो जाता है। पक्षियों के राजा ने अपने मंत्री को भेज कर यह कहलाया कि पक्षिराज बहुत व्यस्त है, कुछ समय बाद आएंगे, आप बताइए कि क्या काम है। बात क्या है? परन्तु राजा ने पक्षिराज के मन्त्री को कुछ कहे बिना लौटा दिया और पक्षिराज को ही आने के लिए संदेश दिया।

अन्त में पक्षियों का राजा गया तो शिष्टाचार के बाद कहने लगा—महाराज! कुछ मत पूछिए, हमें बड़ा काम आ पड़ा था। मुश्किल से पूरा हुआ।

राजा ने पूछा—वह क्या काम था?

पक्षिराज ने कहा—सरकार! एक सवाल था कि देश में पुरुष अधिक हैं या स्त्रियां? सारे पक्षी इसी काम में लगे हुए थे, परसों ही यह काम समाप्त हुआ है।

राजा ने कहा—क्या निर्णय हुआ? क्या पता चला?

उत्तर मिला—स्त्रियां बहुत अधिक हैं।

राजा बड़ा चकित हुआ। कहने लगा—वह कैसे? हमारी गिनती तो बताती है कि पुरुष अधिक हैं। अगर ज्यादा नहीं तो भी दोनों लगभग बराबर होंगे। यह जनगणना पिछले ही वर्ष हुई है। स्त्रियों की आबादी एकदम कैसे बढ़ गई?

पक्षिराज ने सिर झुका कर कहा—महाराज! हमने उन पुरुषों को भी स्त्रियों में ही गिना जो हर समय स्त्रियों की दासता में रहते हैं, उनकी हर अनुचित बात को भी मानते हैं।

राजा चुप रह गया। उसके मुंह से बात न निकली। पक्षी की बात उसे चुभ गई। उसने पंखों का महल बनाने की बात तक न की।

इस प्रकार पक्षिराज की चतुराई से जहां पक्षी बच गए, वहां राजा का स्वभाव भी बदल गया और उसने पुनः रानी की किसी अनुचित और बेढंगी फरमाइश की ओर कभी ध्यान नहीं दिया।

मां की आशीष

विधि के दो पुत्र हुए। एक का नाम था सूर्य और दूसरे का चन्द्र। सभी माताओं की भांति विधि को भी बच्चे अपनी जान से प्यारे थे। आप सौ दुख झेलती पर बच्चों को कोई कष्ट न होने देती।

एक बार सृष्टि के रचयिता ने विधि की कोई इच्छा पूछी तो उसने यही मांगा कि ये मेरे दोनों पुत्र अमर हों। मां के मन में और क्या इच्छा हो सकती है।

बच्चे बड़े हुए। मां को दोनों अति प्रिय थे। सूर्य का स्वभाव अति क्रूर था, वह किसी की कोई बात सहन न करता, लड़ने में भी शेर था और सभी को दुख देता। यहां तक कि अपनी मां को भी सताता था।

एक दिन मां ने सूर्य को किसी के यहां भोज पर भेजा। चन्द्र अस्वस्थ था। सूर्य से कहा गया कि मां के लिए भी और अपने भाई का भी खाना लेता आए। आती बार रास्ते में न मालूम क्या आवेश आया, कहने लगा—मैं क्या किसी का नौकर हूं? खाना फेंक दिया और उस समय घर लौटा जब मां और छोटा भाई जल-भुनकर भूखे-प्यासे सो गए थे।

अब सूर्य मां को भी सताता और भाई को भी दुख देता। चन्द्र स्वभाव का शीतल और विनीत था। वह भाई के सामने बोलता न था, उसके सामने आते ही चन्द्र का रंग उड़ जाता।

एक दिन मां ने कहा—बेटा सूर्य! आज बड़ी गर्मी है, मेरी पीठ पर बहुत पित्ती उछल आई है, जरा इसे मलना।

सूर्य ने कहा—ठीक! और झाड़ू के मुट्ठे की ओर से पीठ को इतनी जोर से रगड़ दिया कि मां चिल्लाने लगी और उसकी पीठ छिल गई, रक्त भी बह निकला।

तभी चन्द्र आया। मां की यह दशा देखकर घी लाया, धीरे-धीरे उसकी पीठ को मला, पंखा किया जिससे मां की पीठ पर ठंडक और उसके हृदय में शान्ति आई।

मां ने सूर्य को शाप दिया—जिस प्रकार तू ने मेरी पीठ में जलन पैदा की, तू भी वैसे ही जलता रहेगा। फिर चन्द्र की ओर मुड़कर कहा—जिस तरह तूने मुझे सुख व शीतलता दी उसी भांति तू भी शीतल रहे और रोज तेरा नया सुन्दर रूप हो।

तभी से सूर्य में इतना अधिक ताप पैदा हुआ और चन्द्रमा इतना शीतल बना कि सभी को सुख देता है।

बाघ और गीदड़

बाघ और गीदड़ का साथ बड़ा पुराना था। जब बाघ अहेर को निकलता तो उसे शिकार की सूचना गीदड़ ही देता था। जब बाघ पेट भर लेता तो जो कुछ बचता वह गीदड़ के हिस्से पड़ता।

एक बार शिकार न मिलने के कारण उन्हें फाके करने पड़े। एक दिन सवेरे-सवेरे गीदड़ ने बाघ को सूचना दी कि एक किसान अंधेरे में बैलों को लेकर खेत जोतने जा रहा है बाघ ने मौका न गंवाना चाहा और गीदड़ के साथ आकर किसान का रास्ता रोक लिया।

यह सतयुग की बात है, जब मनुष्य पशुओं की बोली समझते थे और पशु मनुष्य की। वे एक दूसरे की सुनते और मानते भी थे।

बाघ ने कुशल समाचार पूछा। किसान ने भी डरते-डरते जवाब दिया। उसने भी जान लिया आज सवेरे-सवेरे इससे भेंट हुई है, कुशल नहीं।

बाघ ने कहा—चौधरी, कई दिन से भूखा हूं। अपने बैल खोल दे।

किसान ने जरा सम्भल कर कहा—छोड़ो, मसखरी न करो। तुम जानते हो कि बैल न होंगे तो खेत कैसे जोते जाएंगे, जो खेतों में हल न चला तो मैं क्या खाऊंगा और बाकी लोग क्या खाएंगे? तुम कोई दूसरी जगह देखो।

बाघ ने कहा—न भई, अब दूसरी जगह जाया नहीं जाता, जल्दी कर।

किसान के होश उड़ गए। बाघ भी कायरों और कमजोरों को दबाता था, गरज कर बोला—जल्दी क्यों नहीं करता।

किसान ने हाथ जोड़ कर कहा—भई बाघ, अगर तुमको जरूर ही कुछ खाना है तो मैं घर से अच्छी तगड़ी गाय ले आता हूं। तू बैलों को छोड़ दे, उनके बिना मेरे खेत बेकार हैं।

बाघ ने दांत तेज करते हुए कहा—जा, परन्तु शीघ्र वापस आना। देर न करना। किसान गर्दन झुका कर चला, घर में उसे अपनी स्त्री का डर था।

उधर स्त्री ने उसे जल्दी लौटते देखा तो पूछा—क्या बात है? परन्तु पति के मुख का रंग उड़ा देखकर वह भी घबरा गई और पूछने लगी—हुआ क्या?

किसान से खड़ा न रहा गया, धीरे से बोला—बाघ मिला है, बैल मांगता है।

स्त्री ने पूछा—तुमने क्या कहा?

किसान ने कहा—बहुत खुशामद की, छोड़ता नहीं था, आखिर गाय देने का वचन भर आया हूं।

स्त्री ने कर्कश स्वर में कहा—वाह तुम्हारी अक्ल! अगर गाय दे दी तो बच्चों का क्या होगा? दूध-दही, घी-छाछ यह सब कहां से आएगा?

दोनों सोच में पड़ गए। थोड़ी देर बाद स्त्री ने कहा—अच्छा, मैं इसका कुछ प्रबन्ध करती हूं।

उसने सिर पर पगड़ी बांधी, हाथ में कुल्हाड़ी ली, घोड़े पर चढ़ी और उधर गई जहां बाघ बैठा किसान की बाट देख रहा था। उसके पास पहुंच कर वह कहने लगी—परमेश्वर, कितनी देर हुई बाघ का शिकार नहीं किया, आज अगर मिल जाए, तो मजा आ जाए, मुझे उसकी खाल चाहिए।

बाघ ने झाड़ी की ओट से यह सुना और स्त्री का विकराल रूप भी देखा। यह बाघ भी ऐसा था कि कोई उसे आंखें दिखाता तो वह दुम दबा कर भाग जाता। उसी समय किसान की स्त्री ने कहा—मिल गया, मिल गया! परमेश्वर तुम धन्य हो। आज बाघ मारने की बड़ी इच्छा थी।

इतना सुनना था कि बाघ भाग खड़ा हुआ। उसने सांस ली अपनी कन्दरा में पहुंच कर।

गीदड़ भी छुपा सब देख रहा था। दौड़ता हुआ आया और कहने लगा—बड़े डरपोक हो जी। वह तो किसान की पत्नी थी।

बाघ डरा हुआ तो था ही उसकी बात मानने को तैयार न हुआ, पर गीदड़ ने उसे मना ही लिया और दोनों एक बार फिर उधर जाने की सलाह करने लगे। मन में बाघ डर रहा था उसने कहा—गीदड़, तुम्हें क्या डर? न तुम्हें कोई मारेगा, न खाएगा तू भाग जाएगा और मैं फंस जाऊंगा।

गीदड़ ने कहा—अगर तुम्हें यह डर है तो आओ हम अपनी दुमें बांध लेते हैं।

उन्होंने कस कर दुमें बांध लीं और चल पड़े जहां वे पति-पत्नी बैठे खूब हंस रहे थे।

उन दोनों को आते देख किसान डरा और पत्नी से कहने लगा—भागने की कर, अब नहीं छोड़ेगा।

स्त्री ने कहा—चुप रहो जी, घबराओ नहीं, तुम तो बना-बनाया काम बिगाड़ दोगे।

जब बाघ और गीदड़ बहुत ही पास आ गए, तो स्त्री ने कहा—शाबाश गीदड़! परमेश्वर तुम्हारा भला करे, आज अच्छा तगड़ा शिकार फंसा लाए हो, मैं खा लूंगी तो तुझे भी तेरा हिस्सा मिल जाएगा।

यह कहकर उसने कुल्हाड़ी उठाई और चली उनकी ओर, परन्तु बाघ कहां। वह डरा हुआ तो था ही, यह बात सुनी तो बस एकदम भाग खड़ा हुआ। गीदड़ ने चीख मारी, पर बाघ ने अनसुनी कर दी, वह और भी डरा, भागते-भागते पत्थरों, पेड़ों, गढ़ों, कांटों से उलझते अपनी गुफा में पहुंच कर ही उसने दम लिया, परन्तु उस समय तक गीदड़ के चिथड़े उड़ चुके थे।

उधर घर में किसान को गहरे सोच में पड़ा देख पत्नी ने कहा—डरो नहीं, अब बाघ नहीं आएगा।

किसान ने आह भरी और पूछा—तुमने यह सब कैसे कर लिया?

पत्नी ने हंसते हुए कहा—अच्छे मर्द हो तुम, दुनिया में डर कर भी कभी गुजारा होता है? हिम्मत से काम लिया करो।

आलसी परिवार

बड़े परिवार की बड़ी बातें। एक भाई के परिवार में ऐसा आलस्य छाया कि उनके यहां कोई भी काम को हाथ न लगाता था।

'अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम।
दास मलूका कह गए, सब के दाता राम।।'

यहां ऐसी बात हो गई। जहां बैठ गए, बैठे रहे, जो लेट गए तो किसे हिम्मत है कि उन्हें उठा सके। कपड़े कीचड़ की तरह गन्दे, मुंह मैले, बाप की दाढ़ी जंगली झाड़ी की भांति बिखरी, काम करना तो दूर, अपने मुंह तक न धोते। बुलाए तो बोलना नहीं, अगर बोले भी तो इस तरह मानो भारी बोझ उठाया हो और दूसरा बेकार की मगजपच्ची कर रहा हो। संयुक्त परिवार में चाहे सौ दोष हों पर ऐसे व्यक्ति का निर्वाह वहां ही हो सकता है। गांव के सभी लोग उनके स्वभाव से परिचित थे, उनसे बच-बचकर निकल जाते।

एक बार बाहर के गांव से कोई उस गांव में आया, तो उस घर का एक व्यक्ति अंजीर के पेड़ के नीचे भूमि पर अजगर की भांति लेटा था। मुसाफिर ने पहले तो समझा कोई शव है। परन्तु पास जाकर देखा सांस चल रही है और आंखें अधखुली हैं।

आलसी ने आंखों से संकेत किया कि उसके पेट पर एक अंजीर पड़ी है। मुसाफिर ने अंजीर उठाई तो आलसी भाई ने मुंह खोल दिया। तब तक मुसाफिर का यही ख्याल था कि वह कोई बीमार है, पर आलसीराम जलभुन कर बरस पड़े—देख नहीं सकते, अंजीर बांई ओर डाल दी!

मतलब यह कि वह मुंह हिला कर अंजीर दांई ओर भी न कर सकते थे। न मालूम क्रोध में और भी क्या-क्या बक गया।

अब मुसाफिर को भी क्रोध आया, पर सोचा परदेश है, लोग अपरिचित हैं फिर भी इसके बाप से शिकायत करता हूं।

सामने ही बाप पेड़ का सहारा लिए बैठा था। मुसाफिर ने सारी बात उसे एक सांस में सुना दी और कहा—अपने लड़के को तो समझा, कुछ अक्ल तो दे।

बूढ़े ने कहा—इन कमबख्तों को क्या समझाना। सारा परिवार ही ऐसा है। मैं सारी रात इनको

आवाजें देता रहा, चिल्लाया भी कि उठो आलसियो, कट्टा (भैंस का बच्चा) मेरी दाढ़ी चबा रहा है, पर उनमें से कोई बोला तक नहीं। अच्छा भाई, तुम जाओ अपने रास्ते, यहां पर तो रोज का यही रोना है।

मुसाफिर मन में सोचने लगा जिनके बाप का यह हाल है उनका क्या बनेगा।

कुबड़े को लात

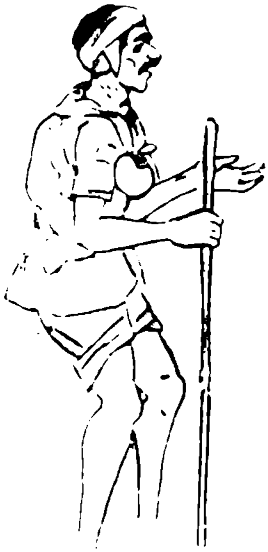

पता नहीं कब की बात है, किसी गांव में एक कुबड़ा और एक अन्धा इकट्ठे रहते थे। आपस में मेल था और वे एक दूसरे के काम भी आते थे। कुबड़ा काम-काज कर, मांग कर कुछ ले आता और अन्धा घर बैठे किसी प्रकार झाड़ू-चौका और खाना-पकाना सरीखे काम कर ही लेता। इस प्रकार रहते उन्हें कई वर्ष बीत गए। यह बात नहीं थी कि उनमें कोई झगड़ा नहीं होता। बीच-बीच में खटपट भी होती और कुढ़न की आग भी सुलगती रहती थी।

एक बार कुबड़ा सोचने लगा—कमाता तो मैं हूं, मेहनत मुझे करनी पड़ती है, जगह-जगह मैं घूमता-फिरता हूं, यह अन्धा घर बैठा खूब खाता है। चोरी से और पकाते समय भी खाता रहता है। इससे छुटकारा ही मिले तो अच्छा है। कई बार कुबड़ा उससे कह भी चुका था—सूरदास जी! तुम कोई दूसरा प्रबन्ध कर लो। स्थान बदलना अच्छा रहता है। नरमी से भी कहा, व्यंग्य से भी और कटु शब्दों में भी, परन्तु अन्धे ने जाने का नाम न लिया।

अन्त में एक दिन कुबड़े ने सोचा इससे तभी छुटकारा मिलेगा, अगर यह कहीं मर जाए। उस दिन घर लौटते समय उसे एक मरा हुआ सांप मिला। उसे वह घर ले आया और कहा—सूरदास! यह लो मछली और आज यह पकाओ।

अन्धे ने सांप को काटा और चूल्हे पर चढ़ा दिया। उसे पकती भाजी चखने की आदत थी। समझा कुबड़ा घर में नहीं, तो बिल्कुल रुक नहीं सका। कहते भी हैं—पकने की प्रतीक्षा हो सकती है, ठंडा होने की नहीं। कड़ाही के ऊपर से जो ढकना उठाया तो एकदम सारा धुआं आंखों पर लगा।

पर बड़ा अचम्भा हुआ वह धुआं क्या लगा, अन्धे की आंखों में कुछ रोशनी आ गई। उसे दिखाई देने लगा। अब वह अन्धा नहीं था। कड़ाही में मछली के स्थान पर सांप के टुकड़े देखकर वह सहम

गया, उसके मुंह से निकला—आज पाजी ने मार ही डाला था। पर वह भी कम न था। यह देखने के लिए कि आकर कुबड़ा क्या करता है, चुपके से कोने में बैठ रहा।

कुछ देर बाद कुबड़ा आया। आती बार वह अपने लिए अच्छे पकवान लाया था। उसने कड़ाही को धीरे से उठाया और उसे एक कोने में उडेलने लगा। थोड़ी-थोड़ी खुली आंखों से अन्धा भी देख रहा था। अब उसे बड़ा क्रोध आया। वह आपे से बाहर हो गया। धीरे से गया और झुके हुए कुबड़े की पीठ पर यों दो लात मारी कि कुबड़ा चिल्लाया, मर गया। पीड़ा से उसकी जान निकलने लगी। लोगों ने इकट्ठे हो कर उसे उठाया।

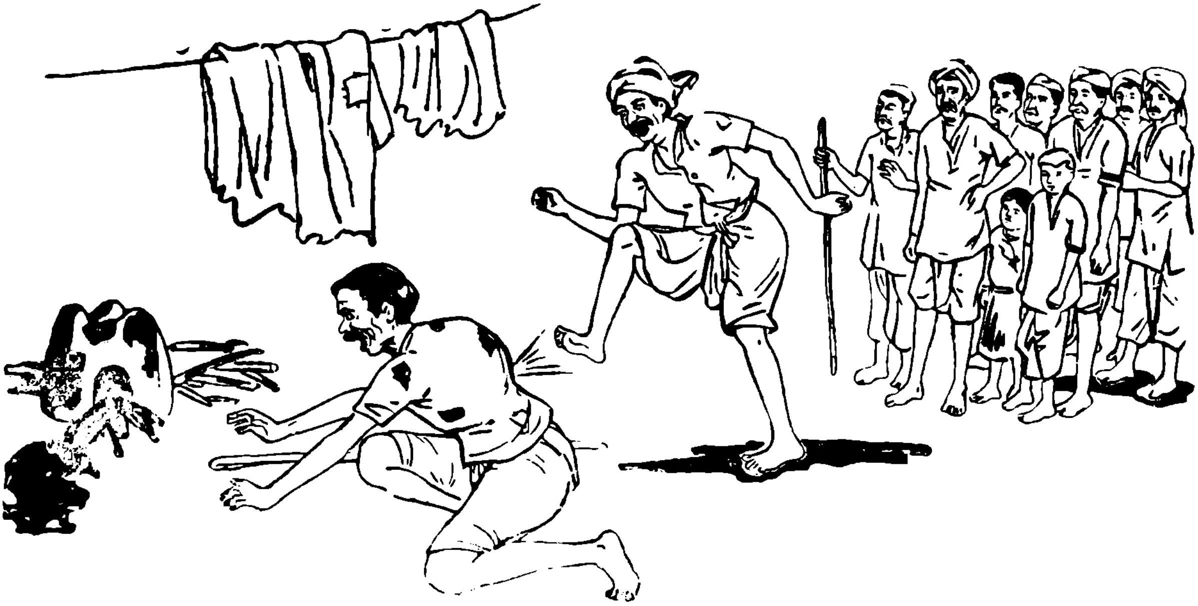

पीड़ा तो बहुत हुई, परन्तु सबको यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उसकी पीठ ठीक हो गई थी। इसके बाद वे बड़े प्रेम से रहने लगे। दोनों स्वस्थ और ठीक हो गए थे, कमाते भी खूब और रहते भी आनन्द से।

कहते हैं तभी से यह कहावत चल पड़ी है—कुबड़े को लात फल गई।

आदमी का मोल

संसार में ऐसे लोग बिरले ही होंगे जो दूसरों को फलते-फूलते देख प्रसन्न होते हैं। अधिकतर ऐसे हैं जो दूसरों की बढ़ती से जलते हैं। कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें दूसरों के अपमान और हानि से ही सन्तोष होता है।

जब राजा विक्रमाजीत का नाम दूर-दूर तक फैल गया और उसके पुण्य प्रताप के सामने बड़ों-बड़ों के यश मन्द पड़ गए तो देवताओं के मन में भी भय पैदा हुआ कि ऐसा न हो कि यह राजा विक्रमाजित संसार जीत कर कहीं हमारा सिंहासन भी जीत ले। उन्होंने देखा कि जो कोई विक्रमाजीत के दरबार में जाता है, उसकी मनोकामना पूरी हो जाती है, वहां से कोई भी खाली हाथ नहीं जाता। राजा और उसके मन्त्री सभी प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं।

देवराज इन्द्र ने सोचा—किसी भांति राजा विक्रमाजीत का मान भंग किया जाए। यह सोचकर राजा इन्द्र ने सोने के बने तीन सिर एक देवता को दिए और कहा—सर्राफ का भेष बनाकर राजा विक्रमाजीत के पास ले जाओ और इनका अलग-अलग मूल्य अंकवा कर ले आओ।

देखने में इन सिरों में रत्ती भर भी अन्तर नहीं था, एक-सा रूप, एक-सी चमक, एक ही सांचे में ढले दिखाई देते थे।

राजा ने दरबार में सभी के सामने वे सिर रखे। उनका मूल्य पूछा गया, पर सभी ने चुप्पी साध ली। कोई कुछ बोल न सका। सभी यही कहते—महाराज, आंखों में नीलम है, होठ लालों के और दांत सच्चे मोतियों के बने हैं। हैं तो सभी बड़े मूल्यवान, पर इनका अलग-अलग मूल्य नहीं आंका जा सकता।

राजा हंसा और कहने लगा—इनका मूल्यांकन करने के लिए मुझे बाहर से किसी को बुलाना पड़ेगा।

नगर भर के सर्राफ आ गए, वे भी उन्हें देखकर चकित हो गए और वे भी यही कह कर चले गए कि इनका मूल्य लगाना हमारे बस की बात नहीं है।

राजा की भृकुटि में बल पड़ गए, जिन मन्त्रियों पर उसे अभिमान था वे आज गूंगे खड़े थे। राजा ने अपने मुख्यमन्त्री से कहा—मुझे आठ दिन के अन्दर-अन्दर इनका ठीक-ठीक मूल्य मालूम होना चाहिए, अगर मालूम न हुआ तो तुम्हें फांसी दे दी जाएगी। यह कहकर सोच में डूबा हुआ राजा महल में चला गया और दरबारी भी अपने-अपने घर चले गए, और तीनों सिर सरकारी पहरे में खुले आम रख दिए गए ताकि जो चाहे उनको देखे और हो सके तो उनका मूल्य लगाए। मन्त्री ने घर जाकर बड़े-बड़े पण्डित

बुलाए, वृद्धों को बुलाया, प्रसिद्ध वाचाल आए, पुरोहित आए, सर्राफ बुलाए गए पर कोई भी इस गुत्थी को न सुलझा सका। मन्त्री की चिन्ता और परेशानी बढ़ती गई। दूसरी ओर देवता खुश थे कि उनका तीर निशाने पर बैठा है और वे इस प्रतीक्षा में थे कि कब राजा मन्त्री के लिए फांसी का आदेश दे और उसके शोक में राज-पाट छोड़ संन्यास ले और उनकी आंखों का कांटा विक्रमाजीत संसार से दूर हो।

छह दिन बीत गए। न तो कोई इन सिरों का मूल्य लगा सका और न इसकी कोई आशा ही रही कि कोई इस प्रश्न का ठीक उत्तर दे सकेगा। मन्त्री की आंखों के आगे अंधेरा छाने लगा, उसकी आंखों में नींद न थी। उसकी स्त्री को भी अपना जीवन बोझिल मालूम होने लगा। वह बहुत बुद्धिमती और गुणवती थी। उसने सोचा—मैं अपने पति को फांसी पर चढ़ते नहीं देख सकती, इससे यही अच्छा है कि मैं पहले ही अपना जीवन त्याग दूं।

यह सोचकर वह उठी और रातों-रात घर से निकल पड़ी और पास ही किसी वन की ओर चल दी। चलते-चलते वह थक गई और एक पेड़ के नीचे बैठी सोच रही थी कि मैं किसी हिंसक पशु का शिकार बनूंगी, विषैले सांप से डसी जाऊंगी या किसी अन्य विधि से प्राण दूंगी।

उसी पेड़ पर तोता-मैना बैठे थे। मैना ने कहा—गंगाराम, कोई बात सुनाओ।

तोता ने कहा—मैना, आज जग-बीती देखो। हमारे पेड़ के नीचे एक महान सती आकर बैठी है। बेचारी पति के दुख से निढाल है और अपनी जान देने के विचार से रातों-रात जंगल में आ गई है।

मन्त्री की पत्नी इन पक्षियों की भाषा समझती थी, उनकी बातें सुनकर उसका ध्यान उन्हीं की ओर लग गया।

मैना ने पूछा—मन्त्री को किस बात का दुख है?

तोते ने सारी बात विस्तार से सुना दी।

मैना ने आह भरी और कहने लगी—यह प्रश्न सच बड़ा टेढ़ा है। भला इसका उत्तर क्या है?

तोते ने कहा—मैना कुछ और पूछो। यह नहीं बता सकता, न मालूम स्त्री हमारी बात समझ ले और हम देवताओं के कोपभाजन बन जाएं। राजा इन्द्र का क्रोध बड़ा भयंकर है।

मैना ने कहा—एक सती को बचाने में कोई दोष नहीं। यह बात मैं जरूर सुनूंगी।

तोते ने मैना का हठ देखते हुए अन्त में कहा—न जाने होनी क्या है? मैना सुन—देखने में तो तीनों सिर एक से हैं, इनकी बनावट भी एक सी है और मानक मोती भी एक से हैं, परन्तु वास्तव में मूल्य गुण का होता है, रंग-रूप का नहीं। इनमें एक दो कौड़ी का है, दूसरा सवा लाख का है, और तीसरे का जितना मूल्य कोई कहे उतना ही कम है।

मैना ने पूछा—वह क्या भेद है? कौन-सा ऐसा गुण है जिसके कारण उनके मूल्य में इतना अंतर है?

तोते ने इसका भेद बता दिया, जिसे सुनकर मन्त्री की स्त्री बड़ी प्रसन्न हुई और पौ फटते-फटते घर लौट आई। आते ही पति के पास गई, देखा कि उसकी दशा काफी बिगड़ी हुई थी। मौत इतनी बुरी नहीं, जितना उसका भय।

उनको सान्त्वना दे कर उसने प्रश्न का उत्तर सुना दिया। मन्त्री ने सुना, बात उसे जंची और वह उठकर दरबार जाने को तैयार हो गया।

उस समय दिन चढ़ आया था। राजा के सिपाही आए, मन्त्री ने संदेश भेजा कि जाओ, महाराज से कहो कि मैं उत्तर लेकर आ रहा हूं, दरबार लगाया जाए।

दरबार लग गया। सारे दरबारी अपने-अपने स्थान पर बैठ गए। बीच में एक चौकी पर तीनों सिर भी रख दिए गए। मन्त्री आया और उसने आते ही सोने के कुछ मनके माँगे। मनके लेकर उसने एक सिर उठाया और एक मनका उनके कान में डाला और उसे हिलाया-डुलाया तो मनका मुँह के रास्ते बाहर आ गया। उसने और भी मनके डाले तो जब मूर्ति के सिर को हिलाया तो आंख, नाक व मुंह से बाहर आते गए। मन्त्री ने कहा—इस सिर का मूल्य दो कौड़ी है जो भी इसे खरीदेगा, बाद में पछताएगा।

उसने दूसरा सिर लिया और एक मनका उसके कान में डाला। बहुत देर हिलाने-डुलाने के बाद वह मनका मुंह के रास्ते बाहर आया। और भी मनके डाले तो वे भी बड़ी मुश्किल से मुंह के रास्ते बाहर आए पर उनको निकालने में उसे पसीने आ गए। वजीर ने कहा—यह सिर सवा लाख रुपये का है।

तीसरे में उसने जितने भी मनके डाले, वे बीच में ही रहे, निकले नहीं—न तो मुंह के रास्ते, न नाक, कान, आंख के रास्ते। उसे दूसरे भी कई लोगों ने हिलाया-डुलाया पर मनके अन्दर ही रहे।

मन्त्री ने कहा—यह सिर अनमोल है, जितना कोई कहे उतना ही कम है। ऐसे सिरों की बदौलत राज बनते हैं, ये भेद कभी नहीं खोलते और पहले सिर की भांति जो लोग कान से सुनी बात झट उगल देते हैं, कोई भेद नहीं रख सकते, वे दो कौड़ी के होते हैं। दूसरों को मुश्किलों में डाल देते हैं और अपनी साख भी खो देते हैं।

राजा यह उत्तर सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ। सर्राफ के भेष में आया देवता भी ठीक मूल्य लगाने पर राजा और उसके मन्त्री की बुद्धिमत्ता को सराहता हुआ चला गया।

जाहता भूत

सारा गांव जाहता से डरता था। किसी से झगड़ा करना, किसी से छीना-झपटी करना और बिना कारण राह चलते लोगों को पीट देना मामूली बात थी। गांव के छोटे-बड़े सब उससे दुखी थे।

एक दिन पंचायत बैठी। उसमें जाहता की चर्चा भी हुई। एक वृद्ध पंच ने कहा—जाहता उद्दण्ड जरूर है, पर यदि उसे किसी काम पर लगाया जा सके तो सम्भव है, वह सुधर जाए।

अभी यह बात हो ही रही थी कि जाहता वहां आ धमका। सभी कुछ सहम से गए और एक दूसरे की ओर देखने लगे।

बूढ़े पंच ने कहा—जाहता चौधरी, आज तुम्हारी ही बात हो रही थी। गांव पर संकट आया है और हम सभी यह समझते हैं कि इस काम में तुम ही समर्थ हो।

जाहता अपनी लाठी पटकते हुए बोला—महतो, कहोगे भी या पहेलियां बुझाते रहोगे।

पंच ने कहा—बात इस प्रकार है कि इस समय फसल तैयार खड़ी है। अन्य गांव के लोग रात में और कभी-कभी दिन में भी चोरी से फसल काट ले जाते हैं। तेरे होते ऐसा हो, यही सबको आश्चर्य है।

जाहता बोला—अब देखूंगा, कौन माई का लाल गांव की फसल को हाथ लगाता है।

एक अन्य पंच ने कहा—हम सब कहेंगे कि फसल काटने पर प्रति घर से तीन पाई (कोई 15 किलो) गेहूं तुम्हें देंगे। जाहता चौधरी, तुम खेतों में झोपड़ी बना लो।

इतना सुनना था कि जाहता ने लाठी जोर से पटकी, हिरण की भांति चौकड़ी भरी और खेतों की तरफ दौड़ गया।

दूसरे दिन लोगों ने देखा कि खेतों के जिस ओर दूसरा गांव था वहां घास-फूस की एक झोपड़ी खड़ी हो गई है। अब जाहता दिन-रात खेतों की रखवाली करता। उस दिन से फसल की चोरी तो रुकी ही, गांव में शांति भी हो गई और लोगों ने सुख की सांस ली।

गांव में एक बूढ़ा भी रहता था जो दूर से जाहता का सम्बन्धी था। वह अकेला ही रहता था। उसकी केवल एक कन्या थी जो कुछ दूर पर एक गांव में ब्याही गई थी। वह बूढ़ा कुछ बीमार भी था और अपनी कन्या को बुलवाना चाहता था। उसने अपने कुछ परिचितों से कहा कि जाकर उसके समधियों

को सन्देशा दे आएं कि वह बीमार है और उसकी कन्या को भेज दें, परन्तु सभी ने कोई न कोई बहाना कर उसे टाल दिया। कहते हैं कि मुसीबत में खोटा पैसा और उद्दण्ड बेटा भी काम आता है।

बूढ़े को जाहता का ख्याल आया। उसका मुख देख कर जाहता मान गया परन्तु इस शर्त पर कि बूढ़ा उसकी झोपड़ी में रात भर रहेगा और खेतों का पहरा देगा। बूढ़ा मान गया और जाहता चला गया।

अब विधाता की करनी ऐसी हुई कि बूढ़ा थका हुआ था, उसकी आंख लग गई और उधर से चोर आ गए। आज वे अपने मार्ग का कांटा अर्थात् जाहता को हटाने की तैयारी करके आए थे। झोपड़ी को आग लगा दी जिसमें बूढ़ा जल मरा।

दूसरे दिन लोगों ने देखा कि झोपड़ी जल चुकी थी। उसमें जले अस्थिपंजर को देखकर लोगों को विश्वास हो गया कि जाहता की मृत्यु हो गई है। अब लोगों को दुख हुआ कि जब जाहता बहुत सुधर गया था और गांव की भलाई का काम कर रहा था, तब वह ऐसी मौत मरा। उसके घर वालों ने रो-पीट कर उसका संस्कार कर दिया।

उधर रात ढले जब गांव के चारों ओर अंधेरा छाया था, सफर से थका हारा जाहता गांव में आया और सीधा अपनी झोपड़ी की ओर गया और वहां अपनी झोपड़ी तथा सामान जला देखकर गांव की ओर गया।

रास्ते में किसी बालक ने उसे देखा और चिल्लाकर भागा—जाहता भूत बनकर आ गया—जाहता भूत! यह सुनना था कि माताओं ने बच्चों को गोद में उठा बांहों में भींच लिया। लोगों ने अपने घरों के द्वार बन्द कर लिए।

कुछ उत्साही लोगों ने मशालें लीं, हाथों में लाठियां और कुल्हाड़ियां लीं और बाहर 'भूत' को देखकर आए। दूर से उसे देखकर चिल्लाए—पकड़ो, मारो-मारो, भाग न जाए।

जाहता समझ गया कि आज लोग मेरे पीछे पड़ गए हैं और जीवित न छोड़ेंगे। वह भागा और जंगल में एक पेड़ पर चढ़ गया और वहीं छिपा रहा। लोग वापस आ गए।

जाहता पेड़ पर बैठा सोचता रहा, गांव वालों को एकदम क्या हो गया? मेरी जान के पीछे क्यों पड़ गए? दिन को जाना और भी कठिन होगा। अभी रात है, अपनी सास के घर जाकर मालूम करूं कि क्या बात है।

वह धीरे से उतरा और छिपता हुआ अपनी ससुराल में जाकर द्वार खटखटाया। सास ने दरवाजा खोला और सामने जाहता को देखकर एक चीख मारी और बेसुध होकर गिर पड़ी। मुंह से केवल इतना निकला—'जाहता भूत'।

जाहता ने फिर जंगल में खिसक जाने में ही अपनी भलाई समझी।

प्रातः होते ही गांव में बात फैल गई कि जाहता भूत बन गया और अपनी सास को खा गया। दूसरी रात जाहता ने अपने घर जाने का निश्चय किया। अभी दीवार फाँदने को तैयार ही हुआ था कि उसकी पत्नी की उस पर नजर पड़ी। वह चिल्लाई—'उनका भूत आ गया' और बेसुध हो गई। लोगों के आने से पहले जाहता फिर भाग निकला।

गांव के पास छोटी सी नदी थी। उसी शाम को वहां घाट पर धोबी कपड़े धो रहा था। जाहता छिपता हुआ उसकी ओर धीरे-धीरे गया। समझा वह अकेला है उसी से मालूम करे कि बात क्या है। अभी वह पत्थर की ओट में खड़ा तरकीब सोच ही रहा था कि कैसे बात शुरू करे कि एक घुड़सवार आया और धोबी से बोला—मेरे कपड़े धो दो।

धोबी कहने लगा—क्षमा कीजिए। शाम हो रही है, आजकल जाहता का भूत फिर रहा है। जल्दी से काम करके घर जाना चाहता हूं।

घुड़सवार ने कहा—मैं तलवार लेकर पहरा देता हूं, तुम निश्चिन्त होकर काम करो।

यह कहकर उसने घोड़े को तट पर खूंटी गाड़कर बांध दिया और स्वयं हाथ में तलवार लेकर बैठ गया। धोबी ने भी सोचा कि इस प्रकार अपना काम भी हो जाएगा।

उधर जाहता भी पत्थर की ओट से धीरे-धीरे निकल कर झुकता हुआ धोबी के पास आया और ज्योंही उसे पुकारा कि धोबी ने चीख मारी और वहीं कपड़े छोड़ तथा सिर पर पांव रख कर भागा।

भय बड़ा छुतहा रोग है। घुड़सवार ने सोचा धोबी तो भाग गया, यह भूत अब मुझे नहीं छोड़ेगा। वह भी घोड़े की ओर भागा और उस पर सवार हो गया, परन्तु जल्दी में खूंटी खोलना भूल गया। एड़ लगाते ही घोड़ा भागा और खूंटी उखड़ गई जो सवार के सर पर आकर टकराई। उसने बिना पीछे देखे चिल्लाकर कहा—जाहता, मुझे छोड़ दे। मैं तो परदेशी हूं। तुम्हारा बैर तो गांव वालो से है।

ऐसी चोट पड़ी कि उसका सिर फट गया और वह मर गया। गांव भर में आतंक फैल गया। लोग कहने लगे—जब जाहता जीवित था, तब भी गांव वालों के नाक में दम कर दिया था और अब मर कर मालूम होता है कि गांव को खा जाएगा। लोग गांव छोड़ने लगे।

इधर जाहता भूख से बेहाल था। वह सीधा कोतवाली चला गया और उसने कोतवाल से न्याय की भीख मांगी। पहले तो कोतवाल उसका विकराल मुख, बढ़ी हुई दाढ़ी-सिर में धूल और विकृत रूप देखकर डरा, परन्तु जब उसे पकड़ा गया तो उसने कोई विरोध नहीं किया।

वह फूट-फूट कर रोने लगा और बोला—अब मैंने लोगों को तंग करना छोड़ दिया तो लोग मेरी जान के पीछे पड़ गए। कोई मुझे पास फटकने नहीं देता। एक रात के लिए मैं दूसरे गांव में गया तो उससे क्या हो गया?

कोतवाल ने सारी बात सुनी। गांव के लोगों ने भी जब जाना कि जाहता नहीं बूढ़ा झोपड़ी में जला था तथा जाहता का भूत नहीं वह स्वयं जीता जागता है तो उनका भय दूर हुआ।

भाग्य का खेल

एक दिन दादी ने कहा कभी-कभी ताने में कही बात ऐसी लग जाती है कि आवेश में आकर मनुष्य बड़े कठिन काम उठा लेता है जैसे एक शहजादे ने लालां शहजादी से ब्याह की ठानी।

बच्चों ने पूछा—लालां शहजादी कौन थी?

दादी ने कहानी सुनाई :-

दूर किसी देश में एक बादशाह के सात पुत्र थे। छह शहजादों के तो विवाह हो गए, सबसे छोटा अभी अविवाहित ही था। उसकी यह आदत थी कि वह हर चीज, हर व्यक्ति में कोई न कोई दोष निकालता रहता। कभी कहता, खाना अच्छा नहीं बना, कभी किसी की नाक लम्बी बताता। एक दिन उसके एक भाई की पत्नी ने क्रोध में आकर कहा—हम भी देखेंगी कि तुम कौन सी लालां शाहजादी की पकी हुई खाओगे। इतना क्यों गर्व करते हो।

यह सुनकर शहजादे को क्रोध आया और वह घर से चला गया। जाते-जाते उसने कहा—अब घर की पकी तभी खाऊंगा जब लालां शहजादी पकाएगी।

यह शहजादा अपने देश से दूर निकल गया और पूछते-पूछते उस देश में जा पहुंचा जहां लालां शहजादी का पिता राज्य करता था। कई दिन नगर में चक्कर काटने के बाद वह किसी भांति बादशाह के बाग में घुस गया और वहां माली के घर रहने लगा।

माली के घर वह बुद्धू-सा बनकर रहा, बातें ऐसी करता मानो हकलाता हो और बहरा हो। माली की स्त्री को उस पर दया आई और उन्होंने बादशाह के कर्मचारियों से छिपा कर उसे अपने घर रख लिया।

कई माह इसी प्रकार बीत गए। एक दिन माली की स्त्री ने सोचा, हमने इसे अपना लड़का बनाया, पर यह बिल्कुल सीधा है, अगर पढ़-लिख जाए तो शायद इसका भी कुछ भला हो। यह सोचकर वह महल के मौलवी के पास गई और उससे कहा—मेरा एक ही भोला भाला और बुद्धू-सा बच्चा है, उसे कोई दो अक्षर रोज सिखा दिया करो, जिससे उसका जीवन भी सुधर जाए।

मौलवी ने कहा—तुम जानती हो कि मुझे समय नहीं मिलता, सारा दिन लालां को पढ़ाते-लिखाते बीत जाता है। लालां सख्त पर्दे में रहती है और उसके पास कोई पुरुष फटक भी नहीं सकता।

मालिन ने खुशामद करते हुए कहा—यह है भी बहरा, बात भी हकला कर करता है, भोला-सा

है, इसे पास बिठा लिया करें एक कोने में अपने पास।

मौलवी ने हामी भर दी और बुद्धू बना शहजादा मौलवी के साथ महल में जाने लगा ने एक बड़े जागीरदार के लड़के को भी ऐसे ही पढ़ाने की व्यवस्था कर रखी थी। पर्दे की बैठ जाती, बीच में थोड़ी ऊंची दीवार-सी थी और दूसरी ओर जागीरदार का लड़का ह मौलवी के पास बैठा हुआ बुद्धू भी पढ़ने का स्वांग करता।

जब कभी मौलवी इधर-उधर जाता तो दीवार के दोनों ओर बैठ लालां और जागीर

आपस में बातें करते रहते और बुद्धू बना शहजादा भी सुनता रहता। एक दिन उसकी बातचीत से यह रहस्य खुला कि लालां की शादी किसी दूर देश के शासक से होने जा रही है। लालां उससे शादी नहीं करना चाहती थी। आखिर निर्णय यह हुआ कि लालां और जागीरदार का लड़का रात के अंधियारे में घोड़ों पर सवार होकर कहीं भाग जाएं और उसी रात उन्होंने भागने की तैयारी भी कर ली।

शहजादे ने सारी बात सुनी और समझी। सन्ध्या समय वह जागीरदार के घर गया और उससे कहा—"आज रात अपने लड़के को बाहर मत जाने देना, क्योंकि मैंने डाकुओं को यह कहते हुए सुना है कि आज रात जब जागीरदार का लड़का बाहर आए, तो उसे पकड़ कर मार दिया जाए।" जागीरदार बहुत घबड़ाया और उसने अपने घर पर कड़ा पहरा बैठा दिया और अपने लड़के को द्वार के बाहर पांव तक न रखने दिया।

उधर बुद्धू ने देखा कि आधी रात हो गयी है और घोड़े तैयार हैं तो वह महल से निकला और बाग के पीछे खड़ा हुआ। खिड़की से देखकर लालां ने समझा कि उसका साथी आ गया है, वह भी जल्दी से उतरी और घोड़ों पर सवार हो रात के अंधेरे में दोनों दूर निकल गए।

दूसरे दिन प्रातः शोर मच गया कि लालां गायब है परन्तु किसी को उसका पता न चल सका।

प्रातः रोशनी में जब लालां ने देखा कि मेरे साथ बुद्धू आ गया है तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ और दुख भी, पर उसने सोचा मैं अब वापस जाने योग्य तो रही नहीं। शायद मेरे नसीब में यही था। उसने अपने मन को समझाया और उसके साथ दिन काटने का निर्णय कर लिया।

वे दूर किसी देश में रहने लगे। शहजादा बाहर ठीक से रहता, काम-काज करता और लौट कर फिर बुद्धू का अभिनय करता।

एक दिन प्रातः लालां स्नान करने के लिए नदी पर गई, वापस आकर उसे याद आया कि उसका नौलखा हार नदी पर रह गया है। उसने शहजादे से कहा कि जैसे भी हो मेरा हार ला दो। शहजादा उसी समय हार की खोज में गया। हार तो उसे मिल गया, परन्तु एक नाग हार की रक्षा कर रहा था और जैसे ही उसने हार को उठाना चाहा, सांप ने उसे डस लिया और वह वहीं अचेत हो गया।

भोर होने को थी। उसी समय जादूगरों के सरदार की कन्या वहां स्नान करने को आई। वह भी बहुत गुणवती और सुन्दर थी। उसने यह निश्चय किया था—जो कोई आदमी मुझे स्नान करने के बाद घाट पर मिलेगा उससे मैं विवाह करूंगी। तभी उस सुन्दर युवक को घाट पर पड़ा देख उसने समझा, आज मेरे विवाह का दिन आ पहुंचा है और मन में उसे अपना पति मान लिया। पर जब उसने देखा कि यह निर्जीव शरीर है तो उसे बड़ा दुख हुआ। उसने अपने भाग्य का खेल समझ जादूमन्त्र के द्वारा किसी अन्य जीव के प्राण उसमें डाल कर उसे जीवित कर दिया और उसे अपने साथ घर ले चली। रास्ते में उसे विचार आया कि मैं एक पुरुष को अपने साथ कैसे ले जाऊं। उसने शहजादे के सिर में एक सुई चुभो दी, जिससे वह मुर्गा बन गया और उसे अपने पास रख लिया। मुर्गे पर किसी को शक

न हुआ और वह जब चाहती उसे मनुष्य बना देती।

एक बड़ा तूफान आया। छत पर से मुर्गा उड़कर दूर किसी नगर के राजमहल पर जा गिरा। आंधी तूफान से अपने आप को बचाने के लिए वह छिपता-छिपता एक कमरे में चला गया, जो पंचकूलां शहजादी का कमरा था, यह शहजादी फूलों सी कोमल और सुन्दर थी।

मुर्गे को लेकर वह शहजादी पुचकारने लगी, तभी उसके हाथ से सुई छू गई, उसने दया करके सुई निकाली तो मुर्गा फिर से शहजादा बन गया। पंचफूलां शहजादी ने पहली बार किसी अन्य पुरुष को देखा और अपने पूर्व प्रण के अनुसार उसने उसे अपना पति वर लिया। अभी वे उलझन में कुछ सोच ही रहे थे कि राजा के सेवकों ने उसे देख लिया और महल में कोलाहल मच गया और सभी 'चोर-चोर' चिल्लाते हुए दौड़े।

शहजादे ने आव देखा न तांव, वह झट महल से बाहर हो गया और भागता दीवारें फांदता किसी घर में छिप गया। घर के लोगों से कहा— मैं शहजादा हूं, पर इस समय बादशाह के सिपाही मुझे चोर समझ कर पकड़ने और जान से मार डालने के लिए आ रहे हैं। जैसे भी हो मुझे बचा लो।

घर का मालिक डर गया और कहने लगा—हम बादशाह का विरोध कैसे कर सकते हैं? एक ही उपाय है और वह यह है कि तुम हमारी एक मात्र कन्या को वर लो और हम कह देंगे कि हमारे घर में मेरी स्त्री, मेरी बेटी और दामाद के अतिरिक्त कोई नहीं।

मरता क्या न करता! उसने हामी भर दी और उनका सम्बन्ध पक्का हो गया। जब बादशाह के सिपाही पूछते-पूछते वहां आए तो उन्हें बता दिया कि घर में पुत्री व जामाता के अतिरिक्त कोई नहीं।

खैर, इस भांति जान तो बची और वह घर जमाई बनकर रहने लगा। उसके ससुर का साहूकारी का व्यवसाय था और वह भी उसका काम सम्भालने लगा और दिन भर दुकान पर बैठता।

उधर लालां ने देखा कि शहजादे को हार की खोज में गए बहुत देर हो गई और वह वापस नहीं लौटा तो उसे चिन्ता हुई। वह स्वयं नदी घाट पर गई। उसे अपना हार तो मिला परन्तु उसके पति का कोई पता न चल सका। वह कई दिन तक प्रतीक्षा करती रही पर वह घर नहीं आया। अन्त में लालां ने भेष बदला और पुरुषों की पोशाक पहन अपने आदमी की खोज में निकल पड़ी।

इसी प्रकार जादूगर की लड़की भी अपनी जादू-विद्या की सहायता से अपने पति की खोज में चल पड़ी। भाग्यवश वे दोनों एक साथ उस शहर में आईं और जब लालां ने शहजादे को दुकान पर बैठे देखा तो उसकी बांह पकड़ ली और रो-रो कर उसे अपने साथ चलने को कहा। शोर सुनकर बहुत से लोग एकत्रित हो गए। उनमें जादूगर की लड़की भी थी। उसने भी उसे पकड़ा और उसे बहुत बुरा-भला कहा। जब बहुत शोर हुआ तो साहूकार की बेटी भी आ गई और उन दोनों स्त्रियों को हटाकर उसे घर ले जाने लगी। पर वहां बहुत भीड़ जमा हो गई, जो सुनता दौड़ आता। एक पुरुष और तीन स्त्रियां उसके लिए आपस में लड़ रही थीं।

अन्त में मामला काजी के सामने पेश हुआ। अपने-अपने साथ जो बीती थी, वह सबने कह सुनाई। सभी बातें बड़ी रोचक थीं। बाद में शहजादे ने अपनी सारी कहानी सुनाई और जब उसने पंचफूलां शहजादी की बात सुनाई तो उसकी गवाही के लिए काजी महलों में गए। पंचफूलां ने भी शहजादे को अपना पति बताया। अब यह रोचक मुकदमा बादशाह के सामने आया। उसने एक बार फिर सारी कहानी सुनकर कहा कि तीनों शहजादे की पत्नियां हैं और चौथी अर्थात बादशाह की पुत्री पंचफूलां उसकी मुंहबोली बेगम है।

बादशाह ने उसे अपना राज्य भी दिया और बड़ी धूमधाम से शादी की। लालां भी अपने पिता की एक मात्र सन्तान थी, उसका राज्य भी उसे ही मिला और अगर धन-दौलत की कोई कमी थी तो वह जादूगर की पुत्री और साहूकार की कन्या ने पूरी कर दी।

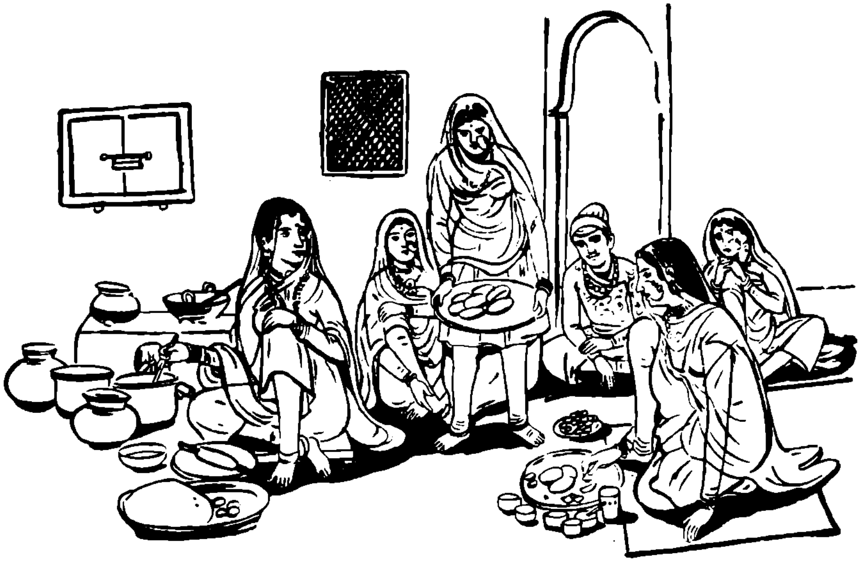

सब कुछ पाकर शहजादा एक बार फिर अपने पिता के देश लौटकर आया और उसने अपनी उसी भावज को, जिसने उसे ताना दिया था, लालां शहजादी के हाथों का पका और पंचफूलां द्वारा परोसा हुआ भोजन खिलाया।

नाम में क्या है?

कहते हैं किसी की चर्चा भी अच्छी नहीं होती। यह क्यों कहते हैं इसका ठीक-ठीक कारण तो पता नहीं परन्तु इससे इतना जरूर होता है कि अच्छे-भले व्यक्ति का सिर फिर जाता है। किसी की सराहना करो तो उसे अभिमान हो जाता है, और अगर टोकते या दोष निकालते रहो तो वह चिन्ता और सोच में पड़ जाता है।

चौधरीजी को केवल इतना कह दो कि आज आपने पगड़ी कुछ जल्दी-जल्दी बांधी होगी। बस फिर वह सारे दिन अपनी पगड़ी को ही ठीक करते रहते। हर पल हाथ पगड़ी पर जाता। जब छोटे थे तो माता-पिता ने उसका नाम बड़े लाड़ से रखा—ठनठन पाल। छोटी अवस्था में किसी को ध्यान न आया पर ज्यों-ज्यों वह बड़ा होता गया तो लोग छेड़ने लगे, कहते— तुम्हारा नाम खूब है।

ठनठन पाल को और कोई कष्ट न था। घर-बार, बच्चे, सम्पत्ति सब कुछ था। शरीर भी स्वस्थ और हृष्टपुष्ट था, परन्तु यही एक दुःख उसे खाए जाता कि मेरा नाम कैसा विचित्र है। लोगों ने भी उसे बड़ा तंग कर रखा था। बार-बार पूछते—तेरा नाम क्या है? कोई नया आदमी आता तो लोग उससे भी कहते-जरा इसका नाम पूछना।

पुराने समय की बात है, अगर आज होता तो वह टी.टी. पाल कहकर अपनी जान छुड़ाता। उसे अपना पूरा नाम बताना पड़ता-ठनठन पाल, और जब कोई हंसता तो उसके मन को बड़ा दुख होता, सिर नीचा किए वह घर चला जाता। उसे यही गम खाए जा रहा था।

एक दिन वह किसी महात्मा के पास गया और अपना दुखड़ा उसे सुनाया। महात्मा ने समझाया, नाम में कुछ नहीं, मनुष्य के कर्म अच्छे हों तो सब अच्छा होगा। पर ठनठन पाल को सन्तोष न हुआ। महात्मा ने समझ लिया कि मामला बहुत बढ़ गया है। बात का रुख बदला और कहा-ठीक है, ठीक है, तू अपना नाम ही बदल ले।

—परन्तु महाराज! क्या नाम रखूं?

नाम रखने का प्रश्न भी सरल नहीं था। महात्मा ने कहा—जा किसी को पूछ ले। स्त्री, पुरुष जो कोई मिले उससे पूछना, जो नाम अच्छा लगे, उचित हो रख लेना।

वह चुपचाप वहां से चला गया। पर किसी से उसका नाम पूछते भी झिझकता। उसके मन में नाम पूछने के सम्बन्ध में संस्कार ही ऐसे बन चुके थे।

एक भिखारिन मिली, पहले उसी से पूछा—भली औरत, तुम्हारा नाम क्या है?

वह पहले तो हिचकिचाई, फिर उसकी शक्ल देखकर बोली—मेरा नाम माया है।

—माया।

वह और आगे चला। रास्ते में एक ग्वाला मिला, जो गायें चरा रहा था। उससे पूछा—भाई, तेरा नाम क्या है?

—मुझे धनपत कहते हैं।

यह नाम भी जंचा नहीं और आगे जाकर देखा कि किसी की शव-यात्रा जा रही थी। कोई बड़ा आदमी मर गया था, जिसे दाह संस्कार के लिए श्मशान ले जा रहे थे। उसने अपने मतलब से पूछा—भई, यह कौन मर गया है?

उत्तर मिला—जीवनदास नम्बरदार।

—जीवनदास! ठीक!

उसके मन को कुछ होश हुआ। सोचा, माया! धनपत! जीवनदास! ये नाम क्या ठीक या सार्थक हुए हैं? और तब उसने मन को समझाया कि नाम को लेकर क्या चाटना है।

दूसरे दिन किसी ने ठनठन पाल कह कर छेड़ा तो उसने झट कहा —

'माया तो भिख मंगनी,

धनपत हुए ग्वाल,

जीवनदास जी मर गए,

भले हैं ठनठन पाल।'

अब सभी को उसका यही जवाब था। जवाब क्या था, एक सीख थी। वह अब चिढ़ाने पर बुरा न मानता, हंस देता।

कुछ दिनों के बाद लोगों ने उसे छेड़ना ही छोड़ दिया।

सोनपरी

सोनपरी राजा की एकमात्र कन्या थी। वह जितनी सुन्दर थी उतनी ही भोली-भाली और सुशील भी। सभी उसे सराहते। राजा और रानी को तो उससे विशेष स्नेह था। शायद इसी कारण उसके भाई राजकुमार की वधू उससे ईर्ष्या करती, परन्तु कुछ कर न पाती थी।

एक बार राजा-रानी तीर्थ यात्रा को गए। अब राजवधू को सोनपरी को हानि पहुंचाने का अवसर मिला। बात इस प्रकार हुई कि सोनपरी अपनी सखियों के साथ मिज्जर के मेले में जाने को तैयार हुई। उसने अपनी भाभी से एक सुन्दर और मूल्यवान ओढ़नी पहनने को मांगी। अपने भाई से अनुरोध करके सोनपरी ने वह ओढ़नी ले ली। भाग्य की करनी ऐसी हुई कि भोजन करते समय ओढ़नी पर कुछ धब्बे पड़ गए। जब राजवधू ने अपनी ओढ़नी पर धब्बे देखे तो उसके क्रोध की सीमा न रही। अपने पीहर से मिली सबसे मूल्यवान ओढ़नी का इस प्रकार खराब होना वह सह न सकी। वह कोप भवन में चली गई।

राजकुमार ने उसे समझाने-बुझाने का बहुत यत्न किया और वैसी ही नई ओढ़नी बनवा देने का वचन भी दिया। पर राजवधू अपने हठ पर अड़ी रही और उसने अपने पति से कहा कि मुझे तो उसी समय शांति मिलेगी, जब इस ओढ़नी को सोनपरी के खून से रंगा जाएगा।

राजकुमार यह बात सुनकर कांप उठा। उसने पत्नी को बहुत समझाने परन्तु उसका कोई फल न हुआ। उधर राजवधू ने कह दिया कि यदि दो दिन के भीतर ओढ़नी सोनपरी के खून में न रंगी गई तो मैं अपने प्राण दे दूंगी।

राजकुमार बड़े संकट में था। राजवधू की आत्महत्या या फिर निरपराध बहन का वध, और हुआ वही जो ऐसी स्थिति में हुआ करता है। पत्नी का हठ जीत गया।

राजकुमार किसी को कुछ भी न कह सकता था। स्वयं किसी बहाने सोनपरी को नदी के तट के पास ले गया और वहीं उसको मार डाला। वहीं पर उसका शरीर जमीन में दबा दिया। पर कहते हैं कि हत्या कभी छिपी नहीं रहती।

कुछ ही सप्ताह बाद लोगों ने देखा कि नदी के तट पर आम का एक पेड़ उग आया है। उसमें फल भी आ गए। लोगों ने यह भी देखा कि पेड़ के पास कई तरह की आवाजें आतीं और कभी-कभी सन्ध्या को पायल की झनकार भी सुनाई देती।

उधर जब राजा रानी तीर्थ यात्रा से लौटे तो राजकुमार ने रो-रो कर उनसे कहा कि एक शाम जब सोनपरी अकेली बाग में खेल रही थी तो परियां उसे उठाकर ले गईं और सारा देश छान मारा परन्तु उसका पता न चल सका। सच कहा है कि एक झूठ को छुपाने के लिए सौ झूठ बोलने पड़ते हैं। यह सुन राजा और रानी बड़े दुखी हुए और उदास रहने लगे।

एक दिन एक धोबी नदी तट पर उसी आम के पेड़ के नीचे बैठा खाना खा रहा था। पेड़ पर आम लगे देख उन्हें तोड़ने की इच्छा हुई। उसने आमों की ओर हाथ उठाया ही था कि आवाज आई —

'बापू के धोबी, आम न तोड़
डाली न मरोड़
सगे भाई ने बहन मार दी
लाल दिया डोर।'

धोबी डर गया। उसने राजा के सिपाहियों को बुलाया और जब सिपाही पेड़ पर चढ़कर आम तोड़ने का यत्न करने लगे तो फिर आवाज आई —

'राजा के सिपाही, आम न तोड़,
डाली न मरोड़

सगे भाई ने बहन मार दी

लाल दिया डोर।'

सिपाही घबरा कर पेड़ से नीचे उतर आया।

बात राजा तक पहुंची। राजा स्वयं नदी तट पर आया, पेड़ से फिर आवाज आई। राजा को पहचानने में देर न लगी कि यह आवाज सोनपरी की थी। उसने पेड़ काटने और उसके नीचे भूमि खोदने की आज्ञा दी। नीचे से सोनपरी का मृत शरीर निकला। राजा वहां फूट-फूट कर रोने लगा। परन्तु जब उसके आंसू सोनपरी के मृत शरीर पर पड़े तो वह जी उठी और माता-पिता को देखकर बड़ी प्रसन्न हुई।

राजा ने जब सब बात सुनी तो क्रोध से पागल हो उठा। उसने राजवधू और राजकुमार को मृत्यु-दंड देना चाहा, तब सोनपरी ने विनय की—मेरे भाई और भाभी का कोई दोष नहीं, उन्हें माफ कर दीजिए। सारा दोष उस ओढ़नी का है, उसे नदी तट पर दबा दिया जाए।

राजा बेटी की बात न टाल सका।

राजा की पगड़ी

एक था राजा। उसके मन में यह बात आई कि लोग पगड़ी क्यों पहनें। पगड़ी इज्जत की निशानी है, और केवल राजा को ही पगड़ी पहनने का हक होना चाहिए। उसने अपनी प्रजा में पगड़ी पहनने को निषेध करने का विचार किया तो उसके मन्त्री ने कहा महाराज, वस्त्र जैसे कोई चाहे पहन सकता है, किसी को इस प्रकार मजबूर करना उचित नहीं लगता।

राजा ने कहा—तो मैं पगड़ी पहनने पर कर लगा दूंगा। यह तो अनुचित नहीं?

मन्त्री चुप हो गया और राजा ने आदेश दिया कि जो कोई पगड़ी पहनेगा उसे कर देना होगा। कर काफी भी था और देखते-देखते लोगों के सिरों से पगड़ी उड़ गई और उसके स्थान पर भांति-भांति की टोपियों का चलन शुरू हो गया। बहुत से लोग नंगे सिर भी चलने-फिरने लगे।

प्रतिवर्ष राजा पगड़ी कर की दर बढ़ाता गया और लगभग सभी ने पगड़ी छोड़ दी। नगर में एक महाजन भी था जो अब भी बड़ी शान से पूर्ववत पगड़ी बांधता था। राजा ने देखा कि सारे राज्य में वही एक व्यक्ति है जो पगड़ी पहने जा रहा है। राजा ने उस पर भारी कर लगाया, जो वह नियम से चुका दिया करता। राजा उसकी भी पगड़ी उतरवाने पर तुला था परन्तु सफल न हुआ। कुछ लोगों ने महाजन को समझा कर या डरा-धमका कर पगड़ी छुड़ाने का भी यत्न किया, परन्तु महाजन न माना। राजा भी अपने हठ पर अड़ा था, परन्तु अन्त में उसने सोचा कि एक ही तो व्यक्ति है। अकेला चना क्या भाड़ फोड़ेगा।

राजा तो उदासीन हो चुका था। लेकिन लोगों ने एक दिन देखा कि महाजन ने खुद पगड़ी उतार दी। सभी चकित थे, राजा को भी विस्मय हुआ कि यह क्यों और कैसे हुआ?

उसने महाजन को दरबार में बुलाया और पूछा—तुमने पगड़ी क्यों छोड़ दी?

उसने उत्तर दिया—महाराज लड़की का बाप बन गया हूं। पगड़ी स्वयं ही उतर गई।

राजा को इस उत्तर पर और आश्चर्य हुआ और उसने कहा—ऐसी कोई बात नहीं, तुम्हारी कन्या हमारी धर्म पुत्री हुई। उसका सारा भार हम पर रहा। उसके कारण तुम पगड़ी पहनना मत छोड़ो।

महाजन हैरान था। इन राजाओं के भी क्या सनक होती है। वह क्या कह सकता था।

समय पाकर कन्या विवाह योग्य हुई। उसका विवाह तय हुआ तो राजा ने उसका सारा प्रबन्ध

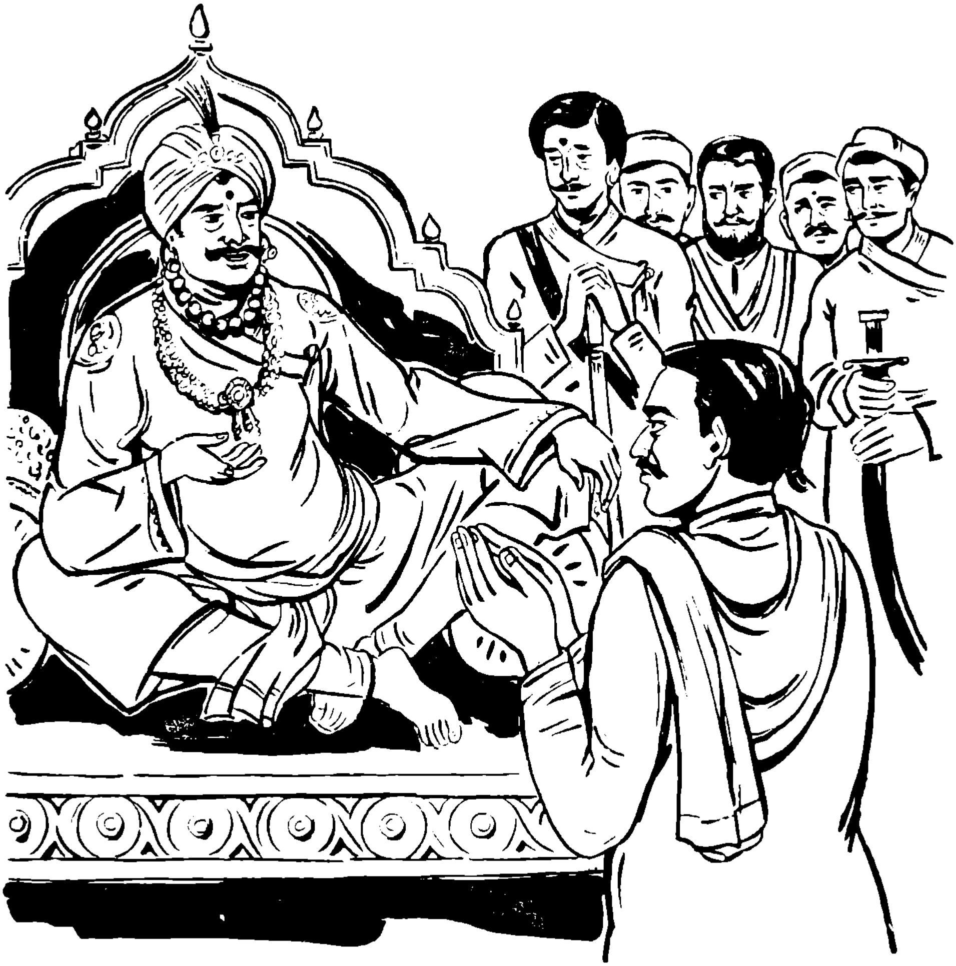

किया। बारात का खूब स्वागत हुआ। दहेज में भी बहुत कुछ दिया गया और वर-वधू विदा हुए। सारा उत्सव बड़ी शान से हुआ था।

जब बारात वापस जा रही थी मार्ग में ठहरना पड़ा। तम्बू लगाए गए लेकिन मालूम हुआ कि तम्बू लगवाने के लिए खूंटे कम थे। झट बाराती बोल उठे कि इतना बड़ा राजा होकर खूंटे भी पूरे न दे सका। बात राजा के कानों तक पहुंची और उसे महाजन की बात सच मालूम हुई कि लड़की के पिता को तो आलोचना सुननी ही पड़ती है।

कुल की मर्यादा

एक राजा की दो रानियां थी। दोनों ने एक-एक कन्या को जन्म दिया। समय पाकर राजकन्याएं बड़ी हुईं। दोनों बहुत सुन्दर थीं। बड़ी रानी की पुत्री का नाम शान्ता था, वह शान्त स्वभाव की थी। दूसरी का नाम था चंचल और वह अपने नाम के अनुरूप बड़ी चंचल और नटखट थी।

चंचल लड़कों के कपड़े पहनती, शिकार खेलती और घोड़े पर सवार होकर दूर-दूर तक निकल जाती। ऐसी ही एक वन यात्रा में उसकी भेंट पड़ौसी राज्य के राजकुमार से हो गई और दोनों में प्रेम हो गया। उन्होंने आपस में विवाह करने का निश्चय कर लिया, परन्तु इसमें बड़ी बाधा यह थी कि दोनों के पिता एक दूसरे के घोर शत्रु थे। इस कारण राजकुमार अपने पिता से अपने मन की बात कहने का साहस न कर सका। परन्तु उसने अपनी माता को सारी बात बता दी। रानी को बड़ा दुख हुआ कि उसका एक मात्र पुत्र बैरी की बेटी से विवाह की इच्छा करे तो इससे कई प्रकार की उलझनें पैदा हो सकती थीं। यह भी वह जानती थी कि राजकुमार बड़ा हठीला है और यदि उसकी बात न मानी गई तो वह कुछ भी कर सकता है। रानी ने राजा से अनुरोध किया कि आपसी वैर भूल कर राजकुमार का आग्रह देखकर और यह सोचकर कि शायद इस सम्बन्ध से पुराने वैर भी समाप्त हो जाएं, अपने पुरोहित को पड़ोसी राजा के पास भेज दें।

उधर चंचल कुमारी के पिता को यह प्रस्ताव बहुत बुरा लगा और उसने बड़े तिरस्कार से प्रस्ताव ठुकरा दिया। अब राजकुमार ने दूसरा उपाय सोचा।

वह भेष बदलकर चंचल के महल के पास घूमने लगा और इस प्रकार उनकी भेंट होने लगी। आखिर एक दिन राजकुमार ने चंचल से कहा कि हम दोनों भाग चलें और अपने राज्य में पहुंचकर विवाह कर लें। चंचल को पहले तो कुछ संकोच हुआ कि युद्ध हो जाएगा, न मालूम कितने लोग दोनों ओर के मारे जाएं, परन्तु अन्त में जब कोई मार्ग न सूझा तो वह उसके साथ भाग जाने को राजी हो गई। प्रेम में अन्धा होकर मनुष्य क्या नहीं कर बैठता।

रात के अन्धकार में दोनों घोड़े पर सवार हुए और उनके घोड़े हवा से बाते करने लगे। दिन चढ़ते वे बहुत दूर निकल गए थे। जब धूप तेज हुई तो वे एक पेड़ के नीचे बैठ कर सुस्ताने लगे।

बातों-बातों में राजकुमार ने पूछा—चंचल, महल से आधी रात के समय भाग कर आते तुम्हें कोई डर तो नहीं लगा?

वह बोली—नहीं तो। मुझे किसी ने बताया था कि मेरी माता भी इसी प्रकार महाराज के साथ भाग आई थीं। मैं डरपोक मां की पुत्री नहीं हूं।

राजकुमार यह सुन चकित रह गया। राजकुमारी चंचल थकी थी, बातें करते-करते हरी घास पर उसकी आंख लग गई।

उधर राजकुमार के मन में एक बवंडर उठा। वह सोच में पड़ गया। इसके पिता इसी प्रकार इसकी मां को भगा लाए थे, कल यही बात मेरे यहां हो सकती है। मां का प्रभाव पुत्री पर अवश्य होता है। उसने निश्चय कर लिया कि वह अपने कुल को इस प्रकार कलंकित नहीं होने देगा।

दूसरे क्षण उसका हाथ तलवार पर था और राजकुमारी का सिर धड़ से अलग हो चुका था। उसने कुल की मर्यादा पर अपने प्रेम की बलि दे दी थी।

अब उसे अपने प्राण बचाने और अपने राज्य की सीमा में चले जाने की भी चिन्ता न थी। वहीं राजकुमारी के शव के पास बैठकर वह राजा के सिपाहियों की प्रतीक्षा करने लगा।

सांझ हो रही थी, जब राजा के सिपाही सरपट घोड़ा दौड़ाते पहुंचे। राजकुमार की मुश्कें बांध कर सिपाही उसे राजा के सम्मुख लाए। राजकुमारी की हत्या पर राजा बड़ा दुखी हुआ। जब राजकुमार

बन्दी बनाकर राजा के सामने न्याय के लिए लाया गया, तो उसने सारी बात सच-सच सुना दी और खुशी से मृत्यु-दण्ड की प्रतीक्षा करने लगा।

राजा के सामने अपने यौवन की घटना घूम गई। वह कुछ लज्जित भी हुआ परन्तु राजकुमार के स्वाभिमान और कुल की मर्यादा के प्रति उसके त्याग भाव पर प्रसन्न भी हुआ।

दरबार राजा का निर्णय सुनने की प्रतीक्षा में था कि कब राजा उसे मृत्युदण्ड सुनाता है, परन्तु यह देखकर सबको आश्चर्य हुआ कि राजा ने उसे न केवल मुक्त कर दिया बल्कि अपनी दूसरी कन्या शान्ता के साथ उसके विवाह का प्रस्ताव भी रख दिया। राजकुमार राजा के इस उदार व्यवहार से बड़ा प्रभावित हुआ।

विवाह का प्रस्ताव राजकुमार तथा उसके पिता को मान्य हुआ और इस नए अटूट सम्बन्ध द्वारा दो पड़ोसी राज्यों की शत्रुता समाप्त हो गई।

धुनिए के चार हाथ

धुनिया को चिट्टा-कुक्कड़ (सफेद मुर्ग) कहते थे। शायद इसलिए कि रुई धुनते उसके सिर और मुंह पर रुई जम जाती, या इसलिए कि उसके सिर के बाल, दाढ़ी, मूंछ, भवें और आंख के बाल सभी सफेद हो गए थे, या फिर इसलिए कि वह सुबह-सबेरे लोगों को आवाजें देना शुरू कर देता था।

सारा दिन छोटे-बड़े सभी जो उसके पास गुजरते उसे 'चिट्टा-कुक्ड़' कह कर छेड़ते। अगर कभी लोग अपने काम में व्यस्त, बिना बोले गुजर जाते तो उसका नशा पूरा न होता, उसे चिन्ता होती कि आज कुशल तो है, मुझे कोई छेड़ता क्यों नहीं? और वह कहना शुरू कर देता कि आज सभी मर गए। ऐसा कब से हो रहा था इसका पता किसी को नहीं, क्योंकि जिन्होंने धुनिए को बचपन में देखा था, वे स्वयं बूढ़े हो चुके थे, परन्तु उसमें कोई अन्तर न पड़ा था। वही लाल रंग, छोटा कद, गठा शरीर, चिल्ला-चिल्ला कर भारी स्वर।

इस धुनिया की जो स्मृति लोगों को है तब वह अकेला था—उसका कोई न था अकेली जान। और तो और उसे कोई चिन्ता भी न थी।

एक बार किसी ने उससे पूछा—तुम्हें कोई फिकर नहीं, कभी तुम किसी बात की चिन्ता नहीं करते, तुम्हें कोई लालसा नहीं, कोई आकांक्षा नहीं, यह क्या बात है? कभी तो कोई इच्छा होती होगी?

धुनिया हंसा और कहने लगा—जितनी इच्छाएं उतनी मुसीबतें, इच्छा न होना ही सब से बड़ा सुख है। बैठो, तुम्हें बात सुनाऊं।

यह कह कर उसने दुकान के किवाड़ बन्द किए, अपने कानों में रुई भरी जिससे लोगों की छेड़खानी वह सुन न पाए और अपनी बीती इस प्रकार सुनाई : —

एक बार काम करते-करते उसका धनुष टूट गया। उसके लिए लकड़ी लाने तवी नदी के पार जंगल में शीशम के पेड़ की मोटी शाख काटने गया। संध्या हो गई थी, सूर्यास्त हुआ ही था और जब अच्छा पेड़ देख कर उस पर कुल्हाड़ी चलाने ही लगा था कि आवाज आई, न-न। देखो मत काटो।

सिर उठा कर देखा तो कोई नहीं था। फिर कुल्हाड़ी उठाई तो फिर वही आवाज हुई। अब वह आश्चर्य में पड़ गया और कहने लगा—भई! तुम कौन हो? मुझे लकड़ी क्यों नहीं काटने देते? मेरा धनुष टूट गया है, उसके बिना मेरा काम बन्द पड़ा है।

आवाज आई। मैं भूत हूं। इस पेड़ पर मेरा वास है। तू इसे मत काट और जो कुछ तुझे चाहिए मांग ले। बता क्या चाहता है?

धुनिया सोच में पड़ गया। क्या मांगे? बड़ा संतोषी स्वभाव था। इतना घबरा गया कि जल्दी में कुछ मांग भी न सका। कहने लगा—मैं अपने मित्र से पूछ कर अभी आता हूं।

भूत ने स्वीकृति दे दी।

धुनिया भागता-भागता आया। पास ही फेरू नाई का घर था, हर समय उसी के साथ उठता-बैठता। हांफते-हांफते पूछा—फेरू, तुम्हें क्या चाहिए मुझ से भूत कह रहा है कि जो चाहते हो मांग लो।

फेरू को सारी बात सुनते और समझते देर न लगी। उसने कहा—जाओ, और उससे कहो कि मुझे तो बना दो राजा और मेरे दोस्त फेरू को वजीर बना दो।

वजीरों के पड़ोस में रहते उसे यही ख्याल था कि वजीर बड़े मजे में रहते हैं। और यदि मेरा दोस्त धुनिया ही राजा बने तो मैं भी वजीरों की भांति ठाठ से रहूंगा। फेरू ने कहा जाओ देर क्यों लगाते हो? चुप क्यों हो गए?

धुनिए ने कहा—फेरू! घरवाली से पूछ लूं। पता नहीं उसकी दूसरी इच्छा हों। उसे पीछे पछतावा न रहे।

फेरू शीघ्र वजीर बनना चाहता था। उसने कहा—ऐसे कामों में स्त्रियों की क्या सलाह? कहते हैं न कि स्त्रियों की बुद्धि एड़ी में होती है, और दोनों हंस पड़े।

वहां पास ही दीवार के साथ कान लगाए धुनिए की स्त्री सब सुन रही थी। पहले तो उसने समझा धुनिया पागल हो गया है, पर जब सारी बात समझी तो कहने लगी—हमें राज नहीं चाहिए, अपना काम ही सम्भालते नहीं बनता, देश कैसे सम्भाला जाएगा। न बाबा, हमें राज नहीं लेना। राजा को क्या सुख होता है? आठों पहर की चिन्ता। हर किसी का भार हमको अपने कन्धों पर नहीं लेना।

बात धुनिए के मन लगी, पर कहने लगा—भूत कुछ दे रहा है क्या मांगें उससे? ऐसे सुअवसर बार-बार नहीं आते।

स्त्री ने कहा—हमारे नयन प्राण अच्छे रहें और काम चलता रहे वही अच्छा है। अगर तुमको जरूर कुछ मांगना है तो यह मांग लो कि तुम्हारे चार आंखें हों—दो पीछे भी और चार हाथ ताकि एक साथ दो धनुष चला सकें और लोगों का काम समय पर न हो सकने के कारण जो बातें सुननी पड़ती हैं, उनसे छुटकारा हो और लोगों का काम हम जल्दी-जल्दी कर सकें।

काम की चिन्ता उसे भी रहती थी। बात जंच गई और वह रातों रात भागता हुआ वहां पहुंचा जहां पेड़ पर भूत उसकी बाट देख रहा था और कहने लगा—भई भूत! तू मुझे चार हाथ और चार आंख लगा दे, जिससे ग्राहकों का काम पड़ा न रहा करे।

भूत ने कहा—ऐसा ही होगा।

देखते ही देखते उसे दो और हाथ लग गए तथा दो और आंखें पीछे गर्दन के जरा ऊपर लग

गयीं। और वह बड़ा खुश हुआ। आगे-पीछे देखता हुआ घर लौटा।

प्रातः जो कोई उसे देखता डर कर भाग खड़ा होता। अब उसकी स्त्री भी उसका विकराल रूप देखकर डर गई और उसकी चीख निकल गई। लोग इकट्ठे हो गए। उन्होंने समझा कि धुनिए में भूत आ गया है और लोग उसे पत्थर मारने लगे। धुनिया भागा परन्तु जिधर जिधर वह जाता, लोग भूत, भूत चिल्लाते हुए उसके पीछे जाते।

सारा दिन भागते-भागते उसमें दम न रहा और संध्या को बड़ी मुश्किल से उस पेड़ के नीचे पहुंचा और चिल्लाता—भूत! मुझे बचाओ, अपनी देन वापस लो, मैं उसके बिना ही ठीक हूं।

भूत को दया आई। उसने फिर से उसका पहला सा रूप बना दिया। धुनिया ठीक तो हो गया परतु उसके घाव और चोटें ठीक होते काफी दिन लग गए, फिर उसने कोई इच्छा प्रकट न की और न ही कोई उसकी इच्छा ही हुई।

धुनिए ने बड़े चाव से यह कहानी सुनाई, उसके मुख पर संतोष और सुख की वह मुद्रा थी जो आज के संसार में कम ही देखने में आती है।

उससे पूछा गया—धुनिये! तू गाली क्यों सुनाता है?

वह हंसा और कहने लगा—मेरा कौन है? यही लोग मेरे हैं, प्रेम और वैर, लाड़ और गाली से मन के सम्बन्ध होते हैं। यदि कोई प्रेम न करे तो उसे चिढ़ाना आसान है, मेरा इन लोगों के साथ ऐसा ही सम्बन्ध बना है। जब छोटे थे तो मुझे चिढ़ाते थे, क्या हुआ जो आज बड़े हो गए, छोटों की बोली भी प्यारी लगती है, मैं अपने इस परिवार के साथ इसी सम्बन्ध में जुड़ा हूं।

धुनिया को मरे कई वर्ष हो गए, उसकी दुकान खण्डहर बन चुकी है, अब उसकी गली में वह प्रेम नहीं दीखता, जो ऐसे लोग अपने साथ लाते हैं और साथ ही ले जाते हैं।

चार चतुर चोर

बहुत दिनों की बात है, किसी पड़ाव पर एक चोर चार यात्रियों की कुछ चीजें चुराता हुआ पकड़ा गया। उस समय वह उनका लोटा उड़ाने की कोशिश में था। यात्रियों ने उसे पास बैठाया और पूछताछ की। चोर ने भी सच-सच बता दिया कि इसी प्रकार किसी के बर्तन, किसी के कपड़े व रकम चुराकर, किसी का छोटा-मोटा सामान उड़ाकर वह अपना और अपने परिवार का पेट भरता है।

यात्रियों ने उससे कहा—यह बहुत बुरा काम है। गरीबों की चीजें इस प्रकार चुराना बड़ा पाप है। यह ले सौ रुपए और जाकर कोई दूसरा काम कर। हैं तो हम भी चोर परन्तु हमारी चोरी और प्रकार की है। अगर देखना चाहता है तो चल हमारे साथ। मगर चुप रहना होगा, मुंह से बात की तो समझो गए। अगर हमारा काम बना तो तुझे भी माला-माल कर देंगे।

चोर के मन में उत्सुकता हुई और वह उन चोरों के संग दूर किसी राजा की नगरी में चला गया। वह चोर एक मन्दिर में रहने लगा, और बाकी चोरों ने अपने भेष बदले और एक-दूसरे से अलग-अलग रहने लगे।

उनमें से एक तो बड़े राजसी ठाटबाट से रहने लगा, जरीदार अचकन, रोबदार पाजामा और कलगी पहन और हाथों में तलवार लेकर दरबार में जाता। वह देखने में भी बड़ा सुन्दर और बांका जवान था। राजा के दरबारी भी मन-ही-मन उसे सराहते।

उसने राजा को बताया—मैं अमुक देश का राजकुमार हूं। घर से नाराज होकर मैं वहां से चला आया हूं। मुकदमे सुनने में रुचि के कारण आपके दरबार में आ जाता हूं। अपने पिता के दरबार में भी मेरा यही काम था।

राजा ने उसकी बड़ी आवभगत की और उसके रहने की यथोचित सुविधा कर दी। बड़ी हवेली दी, नौकर चाकर दिए और धन भी दिया। परन्तु जो कुछ उसे राजा से मिलता वह गरीब लोगों में बांट देता या दान में दे देता।

थोड़े ही दिनों में सभी उसका यश गाने लगो। दरबार में मुकदमे का यदि वह निर्णय करता तो इतना न्यायोचित होता कि सभी उसकी सराहना करते। राजा को उस पर बड़ा विश्वास हो गया और वह राजा का स्नेहपात्र भी बन गया।

विधाता की करनी। राजा के कोई सन्तान नहीं थी। वह सोचने लगा कि क्यों न मैं इस राजकुमार

को अपना दत्तक पुत्र बना लूं, जीते जी इसे राज-पाट के योग्य बना कर बाकी दिन मैं ईश्वर भक्ति में बिताऊं।

राजा की यह इच्छा उसके मन्त्रियों और लोगों ने भी पसन्द की और वह सचमुच युवराज घोषित कर दिया गया। अब तो वह राजा की आंखों का तारा था।

बाकी में से एक गेरुआ पहन कर साधु बन गया और उसने श्मशान घाट पर अपना आसन जमाया। अपने सामने उसने बड़ी सी धूनी जला ली जिसके नीचे एक बड़ा-सा गड्ढा था। यह नकली साधु अपने हाथ किसी से कुछ न लेता और यदि कोई कुछ दे तो कहता, "फेंक दो साले को धूनी में।" सोना-चांदी, धन, आभूषण जो कुछ भी कोई देना चाहता अपनी धूनी में डलवाता। उसकी बड़ी मान्यता होने लगी। कई बार अजीब-सी बातें भी कर देता, जिससे लोगों की उसमें श्रद्धा बढ़ने लगी। एक ने यदि कुछ चढ़ावा दिया तो दूसरे ने उससे भी बढ़कर। अन्धविश्वास भी छूत का रोग है, शायद ही कोई बच पाया हो इससे।

बाकी दो, ब्राह्मण और ब्राह्मणी के भेष में रहने लगे। वे आठ पहर पूजा-पाठ में रहते। किसी से कुछ न लेते थे। अगर वे किसी के घर आग लेने भी जाते तो उसके भी पैसे दे आते और यदि वे पैसे न लें तो आग वापस दे देते। अगर कोई दान लेने के लिए उनसे बार-बार आग्रह करता तो वे गाली भी देते—अरे दुष्टो! हमें धर्म भ्रष्ट कर तुम्हें क्या मिलेगा! और वे रो भी पड़ते, अनुनय विनय करते और कभी भी दान न लेते। इस प्रकार समय बीतने पर उनका भी बड़ा यश फैला। दूर-दूर से लोग उनके दर्शन को आते, वे भी गेरुए वस्त्र पहनते, गले में तुलसी की माला पहने पूजा में लीन रहते। लोग कहते हमारे बड़े भाग्य जो ऐसे भक्त हमारे नगर में पधारे हैं। उन्हें इस प्रकार वहां रहते कुछ वर्ष बीत गए।

उधर युवराज कुछ बीमार हुआ और ज्यों-ज्यों दवा की, रोग बढ़ता गया। वैद्यों ने उपचार में कोई कसर न छोड़ी। जप-तप, ग्रहशान्ति सभी कुछ किया गया, दूर-दूर से वैद्य बुलाए गए। राजा ने दान किया, लोगों ने प्रार्थना की, पर राजकुमार को आराम न हुआ क्योंकि रोग का पता ही नहीं चलता था और एक दिन वह बिलकुल निर्जीव हो गया।

उसकी इस मृत्यु पर सारे राज्य में शोक छा गया। प्रजा व्याकुल थी। उसकी अर्थी के साथ बेशुमार लोग थे। वहां भी लोग विलाप कर रहे थे।

श्मशान घाट पर बैठे साधु ने किसी से पूछा—क्यों, क्या बात हुई है? इतने अधिक लोग आज क्यों आए हैं? इस प्रकार क्यों रो रहे हैं? कौन मर गया है?

एक आदमी ने बताया—महाराज! हमारे राज्य का युवराज मर गया है, बड़ी दुखद मौत हुई है, बेचारा बड़ा भला था।

साधु ने उसे देखने की इच्छा प्रकट की। लोग उसे अर्थी के पास ले गये। उसके मुंह पर से कपड़ा

हटाया गया तो साधु एकदम चिल्लाया—साला नाटक कर रहा है। अच्छा भला तो है। ऐसे ही लोगों को रुला रहा है।

यह कहकर साधु ने अपने पांव से खड़ाऊं उतारा और एकदम उसके सिर पर चार पांच लगा दीं। लोगों ने समझा, साधु पागल हो गया है। उन्होंने उसे पकड़ लिया पर वे देखकर चकित हो गए कि राजकुमार 'राम-राम' करता हुआ उठ बैठा। लोग कुछ डरे, कुछ हिचकिचाए पर जब उन्होंने देखा कि राजकुमार जीवित होकर उठ बैठा है और उसे महल में ले जा रहे हैं तो वे बहुत प्रसन्न हुए।

भीड़ साधु के पांव पर गिर पड़ी। लोग उसे साक्षात् देवता समझने लगे। अब उसकी धूनी पर इतना चढ़ावा आने लगा कि उसे कई स्थानों पर गड्ढे खोदकर धूनी लगानी पड़ी। हर समय उसके पास भक्तों की भीड़ लगी रहती और वह अपने आसन पर बैठा रहता।

एक दिन रानी ने राजा से कहा—महाराज! वह महात्मा कितने पहुंचे हुए हैं जिन्होंने हमारे पुत्र को दूसरा जन्म दिया। हम भी उनके दर्शन करें।

साधु ने राजमहल में जाने से इन्कार कर दिया। राजा और रानी उसके दर्शनों के लिए श्मशान घाट गए।

बातें करते-करते रानी ने राजा को संकेत दिया कि यह साधु हमारे मृत दत्तक पुत्र को यदि जीवित कर सकता है, तो कोई ऐसा उपाय नहीं कर सकता कि हमारे अपनी सन्तान हो? राजा ने टालने की कोशिश की, पर स्त्री हठ। आखिर राजा ने रानी की इच्छा साधु को बता ही दी। साधु कुछ हंसा फिर गम्भीर हो गया। उसने कहा—जाओ, जो कुछ तुम्हारा है उसी पर सन्तोष रखो और ईश्वर का धन्यवाद करो।

उस समय तो वे आ गए, परन्तु एक दिन रानी अकेली वहां गई और उसने साधु से विनय की—महाराज, क्या हमारे सन्तान नहीं होगी?

साधु ने उत्तर दिया—रानी! आज से दस दिन बाद राजा का परलोक गमन होगा, सन्तान तो दूर रही, यदि सुहाग भी रहे तो भी बड़ी बात है।

यह सुनकर रानी के पांव तले की मिट्टी निकल गई। रोती-रोती महल में आई और सारी बात राजा को सुना दी। राजा भी घबराया। कर भी क्या सकता था।

दोनों फिर साधु के पास आए और उसके पांव पकड़कर कोई उपाय पूछने लगे। साधु ने पहले तो टाल दिया पर जब देखा कि वे नहीं मानते तो कहने लगा—राजा, हर बात का उपाय होता है। इस पर बड़ा खर्च होगा, परन्तु तू देश का राजा है, तुझमें सामर्थ्य है, तो सुन आठ दिन के अन्दर एक सफेद हाथी लाओ, उसे सोने से लाद दो, उस पर सोने का हौदा लगाओ, और हीरों, मोतियों, पुखराजों और लालों से जड़ी हुई झूलें उस पर लगा दो। हौदे पर ऐसे ब्राह्मण दम्पत्ति को बैठा दो, जिन्होंने कभी दान न लिया हो और उन्हें नगर से बाहर कर दो और ध्यान रहे कि वे कभी नगर में लौटकर न आएं।

राजा महल में आया, उसने मन्त्रियों से सलाह की, सिपाही बुलाए गए, उन्हें हाथी लाने के लिए भेज दिया गया, कारीगर हौदा बनाने लगे, सोना और हीरे सारे देश भर में से एकत्रित कर लिए गए।

दान न लेने वाले उन दो ब्राह्मण-ब्राह्मणी को छोड़ और कोई न मिला और वे मानते न थे। राजा के मन्त्री उन्हें मनाने की चेष्टा करते, लोग खुशामद करते परन्तु वे मानते ही न थे। वे राजा के मन्त्री उन्हें मनाने की चेष्टा करते, लोग खुशामद करते परन्तु वे मानते ही न थे। वे राजा को गाली देते—इस दुष्ट राजा का नाश हो, उसका कुछ न रहे, हमारा धर्म नष्ट करने पर तुला है।

साधु को भी हजार-हजार गाली देते।

जब वे नहीं माने तो साधु ने सुझाव दिया कि उन्हें बलपूर्वक बांध कर हाथी पर चढ़ा दिया जाए और सिपाही पीछे लगाकर नगर से बाहर कर दिया जाए और उन्हें पुनः राज्य में कभी न आने दिया जाए।

सातवें दिन हाथी आया, उसका वैसे ही सोने और जवाहरात से श्रृंगार किया गया, ब्राह्मण-ब्राह्मणी को बांध कर हाथी पर बैठा दिया गया और सिपाही पीछे से उसे हांकते हुए उन्हें नगर से बाहर कर आए। इस हालत में भी वे हाथ-पांव मार रहे थे, राजा और लोगों को गाली भी दे रहे थे, और शाप भी।

जब उनका हाथी श्मशान घाट के पास एक पुल पर से जा रहा था, तो साधु ने कहा—ये कौन हैं? क्यों चिल्ला रहे हैं! साले लोभी! इतना कुछ पाकर भी उनकी लालसा न गई।

अपने पास बैठे हुए लोगों से कहा—यहां से भी खोदो, इधर से भी खोदो, मेरी धूनी भी तोड़ दो और जो कुछ निकले उन्हें दे आओ। हाथी के हौदे पर डाल आना।

उन खड्डों से बेहद दौलत निकली। चार साल का चढ़ावा था। लोगों ने सब कुछ लिया और हाथी के हौदे पर डाल दिया और फिर हाथी राजा के राज्य से बाहर हो गया।

कुछ देर बाद साधु ने हरिद्वार के कुम्भ मेले में जाकर एक बहुत बड़ा यज्ञ करने की इच्छा प्रकट की। अब उसने अपने मुंह से लोगों से कुछ मांगा था, और राजा से भी। सभी ने अपनी-अपनी सामर्थ्य से बढ़कर दिया और एक दिन सब कुछ समेट कर साधु भी चलता बना।

थोड़े दिन के बाद राजकुमार भी संभलने लगा। अब वह उतना कमजोर नहीं था, मुख पर फिर से कान्ति आने लगी थी, खाना-पीना और चलना-फिरना शुरू कर दिया था। एक दिन उसने राजा से कहा—मुझे अपने माता-पिता की याद आ रही है और इतनी बड़ी बीमारी के बाद मैं उनसे मिल आता हूं, पता नहीं वे किस हालत में हैं?

राजा ने बड़ी प्रसन्नता से अनुमति दे दी और उसके माता-पिता और सम्बन्धियों के लिए बहुत से उपहार दिए, यहां तक कि राजा का कोष और साहूकारों की तिजोरियां भी खाली हो गई।

चारों चोर एक स्थान पर मिले। वह चोर भी उनके साथ आ गया था, और उन्होंने उसे खूब धन दिया और कहा—तू चोरी छोड़ दे, यह तेरे बस की बात नहीं है, कोई दूसरा काम कर।

उसने कहा—और तो मैंने समझ लिया, पर मुझे यह मालूम न हो सका कि आप में से जो राजकुमार बना था वह श्मशान घाट पर जाकर जीवित कैसे हुआ?

उसने उत्तर दिया—मैं छह महीने प्राणायाम करके शरीर को दुबला करता रहा था और मैंने अपने प्राण तालू पर चढ़ा लिए और सिर पर खड़ाऊं लगने से पुनः जान आ गई।

दूसरे ने कहा—जो भी काम करना हो, उसके लिए बड़ी साधना करनी पड़ती है, बड़ा त्याग करना होता है, मन को छोटे-छोटे लोभों से बचाना पड़ता है। तू क्या समझता है कि घर आते धन को छोड़ना या फिर श्मशान घाट पर कई साल तक बैठे रहना आसान है? यह कहकर वह चलते बने। फिर वे कहां गए इसका किसी को पता न चला।

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

ISBN : 81-230-0248-3
मूल्य : 26 रुपये